चन्दामामा
माँ - बच्चों का मासिक पत्र
50
8

Photo by T. S. Satyan

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

देकर मुद्रा कहा सन्देश

प्रेषक :
सुरेशकुमार सक्सेना, शहडोल.

फ़रवरी १९५८

विषय - सूची

★

एक प्रति ५० नये पैसे   वार्षिक चन्दा रु. ६—००

Remy
SNOW
वह सुन्दर है
वह उपयोग करती है
रेमि स्नो और पाउडर
AIYRA-333
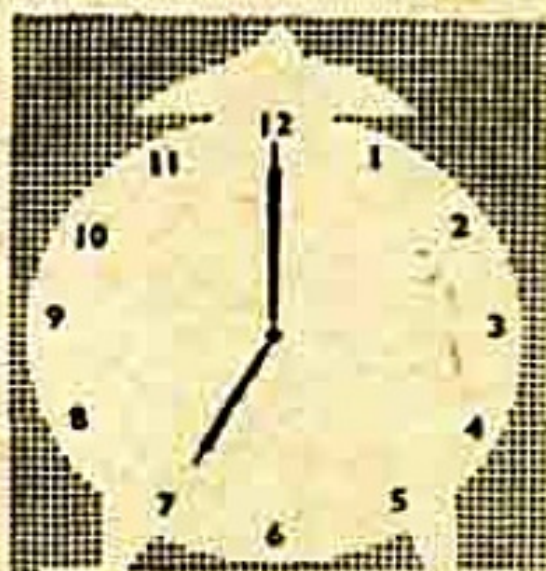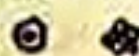
THE CHOICE
Pencils
AJANTHA
BLACK LEAD
EMBESEE
BLACK LEAD
IMPERIAL
COPYING
ACCOUNTANT
COLOUR
CHECKING
COLOUR
SPECTRUM
12, COLOURS
EMBESEE ★ HB
Manufactured by
THE MADRAS PENCIL FACTORY
3, STRINGER STREET.
MADRAS.

लिली की

माल्टो

बिस्कुट

बच्चों की मनपसन्द की हैं।

Lily's MALTO

LILY BISCUIT CO. PRIVATE LTD., CALCUTTA-4

गुण में अतुल्य, पर दाम में कम

"आइरिस इन्क्स"

हर फाउन्टेन पेन के लिए उम्दा,

१, २, ४, १२, २४ औन्स के बोतलों में मिलता है।

निर्माता :

रिसर्च केमिकल लेबोरटरीज

मद्रास-४ ★ नई दिल्ली-१ ★ बेन्गलोर-२

चन्दामामा
संचालक : चक्रपाणी
प्रायः बच्चे चीजें जल्दी खराब कर देते हैं। अगर पाँच चीजें जमा करते हैं तो दस खो भी बैठते हैं। बच्चों की तुलना वानरों से की जाती है।
इसलिये बच्चों के लिए यह समझना आवश्यक है कि हर चीज की कभी न कभी जरूरत पड़ ही जाती है। लापरवाही अत्यन्त शोचनीय है।
इस सत्य का निरूपण ही "कील की कीमत" में हुआ है।
वर्ष : ९ फ़रवरी १९५८ अंक : ६

मुख - चित्र

कौरव सेना को अकेला जीतकर अपनी गौ को वापिस लाने के लिए उत्तर रथ पर चढ़कर जा रहा था। "बृहन्नला! कौरवों को हराकर हमें जल्दी वापिस आना है, इसलिए जल्दी जल्दी रथ को रणक्षेत्र की ओर ले जाओ।"

बृहन्नला का इशारा पा घोड़े हवा से बातें करने लगे। थोड़ी देर में श्मशान आया। रथ को शमी वृक्ष के पास ले जाकर बृहन्नला ने उत्तर से कहा—"देखो, वे हैं कौरव सेनायें।"

कौरव सेना-समुद्र को देखकर उत्तर भय से काँपने लगा। उसके हाथ पैर ठंडे हो गये।

"बृहन्नला! इतनी बड़ी सेना को तो देवता भी नहीं जीत सकते हैं। मैं अकेले कैसे जीत सकूँगा। रथ को तुरन्त वापिस ले चलो।" उत्तर ने कहा।

"कुमार! तुम्हें डरता देख शत्रु हँसेंगे। कौरवों से लड़कर गौवें छुड़ाने तुम आये हो। वह काम बिना किये कैसे वापिस जाओगे? अगर गये भी तो क्या वे सब तुम्हारा परिहास नहीं करेंगे? तुमने उनके सामने शेखी बखानी थी कि तुम कौरवों को जीतकर आओगे।" बृहन्नला ने कहा।

"कौरव अगर गौवें लेकर जाना चाहते हैं, तो जाने दो। स्त्रियाँ यदि हँसती हैं तो हँसने दो। पर मैं उस सेना से युद्ध नहीं करूँगा।" कहता उत्तर रथ से उतरकर भागने लगा। अर्जुन उसके पीछे भागा। उन्हें देखकर कौरव सेनायें हँसने लगीं।

सौ अंगुलों में, अर्जुन ने उत्तर के बाल पकड़ लिये। उत्तर हाथ जोड़कर कहने लगा—"बृहन्नला, अगर तुमने मुझे जाने दिया तो तुम्हें बहुत-सा सोना, गहनें और दस हाथी दूँगा।

"अरे कायर, अगर तू डरता है तो इन कौरवों से मैं युद्ध करूँगा। मेरा रथ हाँको। बस, तुम पर कोई आपत्ति नहीं आने दूँगा।" कहते हुए अर्जुन ने उत्तर को रथ में लाकर बिठाया।

गूँगा

[गतांक से आगे]

राजा ने ज्योतिपियों को बुलवाकर पूछा— "आप लोगों ने, जब मेरा लड़का पैदा हुआ था, बताया था कि उसमें कोई अशुभ लक्षण नहीं हैं, उसके कारण कोई अनिष्ट नहीं होगा। मेरा लड़का कतई बावला है, बहरा है, गूंगा है। आपकी बातें बिल्कुल झूटी थीं। अब क्या कहते है?"

"आपने कई व्रत-उपवास करके यह पुत्र पाया था। इसलिये खुशियाँ मना रहे थे। उन खुशियों में हम कैसे कहते कि यह अभागा है! इसलिये हमने आपको झूट बतलाया था।" ज्योतिपियों ने कहा।

"अगर यह बात है तो अब क्या किया जाये?" राजा ने पूछा।

"महाराज! यदि यह बालक जीवित रहा या तो आप पर, नहीं तो महारानी पर नहीं तो राज्य पर, आपत्ति आकर रहेगी। इसलिये अशुभ रथ में, अशुभ लक्षणवाले घोड़ों को जोतकर, उसमें इस बालक को बिठाकर पश्चिमी द्वार से श्मशान ले आकर, वहाँ उसे गड़वा दीजिये।" ज्योतिपियों ने सलाह दी।

राजा ने वैसा ही करने के लिए कहा। यह सुन चन्द्रादेवी ने राजा से कहा— "आपने कहा था कि आप मुझे एक वर देंगे। अब वह वर दीजिये।"

राजा मान गया। "यह बात है तो मेरे लड़के का राज्याभिषेक करवाइये।" रानी ने कहा। "यह नहीं हो सकता। तेरे लड़के की जन्मपत्री अच्छी नहीं है।"—राजा ने कहा।

"भले ही वह सारे जीवन भर राज्य न करे—उसे कम से कम सात वर्ष राज्य

करने दीजिये।" रानी ने कहा। राजा ने कहा कि यह नहीं हो सकता। आखिर राजा यह मान गया कि तेमिय सात दिन राज्य करे।

चन्द्रादेवी ने तुरत अपने लड़के को उचित वस्त्र और आभरण पहिनाये। सारा नगर सजाया गया और यह घोषणा कर दी गई कि उस दिन से महाराजा तेमिय का परिपालन प्रारम्भ हो गया था।

रात भर, चन्द्रादेवी ने अपने लड़के के पास बैठकर कहा—"बेटा! मैंने तेरे कारण इन सोलह सालों से आँखें नहीं मूंदी हैं। रोते रोते मेरी आखें सूज गई हैं। मुझे मालूम है तू बावला नहीं है। उठो और घूमो फिरो।" उसे बहुत मनाया समझाया पर तेमिय न हिला-डुला।

इसप्रकार छः दिन बीत गये। राजा ने अपने सारथी, सुनन्द को बुलाकर आज्ञा दी। "कल शाम तक एक अशुभ-रथ में अशुभ लक्षणवाले घोड़ों को जोत कर, उसे तैयार रखो। उसमें तेमिय को बिठाकर पश्चिम द्वार से श्मशान ले जाओ। वहाँ एक गढ़ा खोदकर, उसमें उसे गाड़कर, स्नान करके, वापिस चले आओ।

अन्तिम रात्रि आई। चन्द्रादेवी ने अपने लड़के के ऊपर गिर कर कहा—"राजा ने तेरी मृत्यु की आज्ञा दे दी है। कल तेरी आयु खतम हो जायेगी, बेटा!"

यह सुनते ही बोधिसत्व बहुत खुश हुये। "जो तपस्या मैंने सोलह साल से की थी। वह अब सफल होने जा रही है।" उन्होंने सोचा। यह जानते हुये भी कि माँ का दिल दहल रहा था, तो भी उन्होंने किसी प्रकार की उसे सान्त्वना न दी।

सवेरे होते ही, सारथी सुनन्द ने रथ तैयार कर, रानी से कहा—"मालकिन,

आप तो जानती हैं राजाज्ञा का पालन करना ही होगा।" चन्द्रादेवी! अपने लड़के को पकड़कर रोने लगी। सारथी ने आसानी से तेमिय को उठाकर रथ में रख दिया। यह सोचकर कि वह पश्चिमी द्वार की ओर जा रहा था वह पूर्वी द्वार की ओर चला।

पूर्वी द्वार से निकलकर, तीन योजन जाने के बाद रथ रुका। वहाँ सुनन्द को एक जंगल दिखाई दिया और उसको भ्रम हुआ कि उसके पास श्मशान था। वह तुरत रथ से उतरा। तेमिय के आभूषणों को एक तरफ़ रख, गढ़ा खोदने लगा।

"सोलह वर्षों से, जो अवयव हिले डुले न थे, अब उनको काम मिला है, यह सोच बोधिसत्व खड़े होकर, अपने हाथ रगड़ने लगे। रथ से उतरकर इधर उधर चलकर भी देखा। यह देखने के लिए उनमें कितना बल है, उन्होंने पीछे से रथ को उठाकर देखा। वह फूल के गुच्छों की तरह उठ गया।

फिर उन्होंने गढ़ा खोदते सुनन्द से पूछा—"क्यों भाई, क्यों यों गढ़ा खोद रहे हो! क्या बात है!

"महाराजा का लड़का बावला है, गूँगा है, बहरा है। अपाहिज है। इसलिये गढ़ा खोदकर उसको गाड़ना है।" सुनन्द ने बिना पीछे देखे ही कहा।

"ठीक तरह देख। न मैं अपाहिज हूँ। न बहरा ही हूँ। तुम मुझे गाड़ कर बहुत बड़ा पाप कर रहे होगे।" बोधिसत्व ने कहा। सारथी पीछे मुड़ा। राजकुमार को देखकर हैरान रह गया।

"आप कौन हैं! आपका नाम क्या है! आपके पिता का नाम क्या है!" उसने पूछा।

"यदि मैं आपको वापिस ले गया तो आपके पिताजी, माताजी और प्रजा खुश हो कर मुझे न मालूम क्या क्या ईनाम देंगे।" सारथी ने कहा।

"अरे पागल। अब मुझे किसी की खुशी से वास्ता नहीं है। आज मेरी तपस्या पूरी हुयी है। मेरा जन्म सफल हुआ है। मैं पूर्ण मानव बन गया हूँ।" बोधिसत्व ने कहा।

"तो फिर आपने इतने दिन यह क्यों दिखाया कि आप गूँगे हैं, बहरे हैं!" सारथी ने पूछा। "कभी मैंने राज्य किया था। उसके बाद मुझे नरक भुगतना पड़ा। यह जानकर कि मुझे फिर राजा बनना पड़ेगा मेरा मुख बन्द हो गया। मेरे सामने ही मेरे पिता ने चोर को बड़ा कठिन दण्ड दिया। उसके बाद मेरे कान बन्द से हो गये। मैं बावला-सा हो गया। जब यह कोई जान गया हो कि यह जीवन पानी के बुलबुले की तरह है, दुखमय है, क्या दूसरों पर क्रोध करेगा! क्या इसके लिए दूसरों को दण्ड देगा! इतना-सा सत्य जाने बगैर लोग अज्ञान में पड़े रहते हैं!" बोधिसत्व ने कहा।

बोधिसत्व ने सच कहा पर सारथी विश्वास न कर पाया। उसने रथ के पास जाकर देखा कि उसमें न राजकुमार था, न उनके आभूषण ही। वह असलियत जान गया। उसने बोधिसत्व के पैरों पर पड़कर कहा—"महाराज! अगर यही बात है तो इस जंगल में आने की क्या जरूरत है! चलिये नगर ही चलिये। आराम से राज्य कीजिये।"

"मैं, राज्य और वैभव नहीं चाहता। उनके लिए, जाने मुझे कितने ही पाप करने पड़ेंगे।" बोधिसत्व ने कहा।

सारथी ने कहा—"महाराज, मुझे भी अपने साथ आने दीजिये।"

"यह नहीं होगा। यह रथ राजा का है। उसे राजा को दे दो। जो कुछ तुम्हें लेना देना है, वह सब कर लो। फिर सन्यास ग्रहण करो।" बोधिसत्व ने कहा।

यह सोचकर कि उसके नगर जाते ही राजकुमार जंगल चला जायेगा सारथी ने कहा—"स्वामी तो आप वचन दीजिये कि मेरे वापिस लौटने तक आप यहीं रहेंगे। राजा को मैं साथ ले आऊँगा। वे आपको देखकर बहुत प्रसन्न होंगे।" बोधिसत्व ने वचन दिया कि उसके वापिस आने तक वे वहीं रहेंगे। सारथी उनकी चरणधूलि लेकर चल दिया।

रथ को खाली आता, अपनी खिड़की से देख, रानी चन्द्रादेवी जोर से रो पड़ी। सारथी को बुलाकर पूछा—"क्यों, क्या मेरे लड़के ने अन्तिम क्षण में भी मुख से कोई बात नहीं कही! उसने हाथ पैर नहीं हिलाये!" "मालकिन! वे बहरे और गूंगे कहाँ है! राज्य करने के भय से उन्होंने इसका ढोंग किया था। वे हमारी तरह जीना नहीं चाहते थे। वे एक दिव्य मार्ग पर जा रहे हैं। आप स्वयं देख लेंगी।" यह कहकर सारथी ने जो कुछ गुज़रा था कह सुनाया। रानी के दुख भरे आँसु आनन्दाश्रु हो गये। उसने यह बात तुरत राजा से कही।

राजा बहुत से लोगों को लेकर अपने लड़के को देखने चला। उसके पहुँचने से पहिले, इन्द्र ने विश्वकर्मा को बोधिसत्व के लिए एक अच्छी पर्णशाला बनाने के लिए कहा। राजा, इसी पर्णशाला के पास ही गया।

बोधिसत्व ने, पिता के लिए एक आसन रखवाया। पर राजा, पुत्र के प्रति गौरव के कारण नीचे बैठ गया। उसने अपने लड़के को जैसे तैसे वापिस ले जाना चाहा। इसलिए उसने कहा—"बेटा! तुम्हारे लिए यह पर्णशाला क्यों! सख्त जमीन पर क्यों सोते हो! कन्दमूल खाने की क्या जरूरत है! कितने ही महल हैं, कितने ही दास दासी हैं....राज्य है! आओ और आराम से राज्य करो!"

"जो आप सुख बता रहे हैं। वे सब नश्वर हैं। मेरा उनसे कोई सम्बन्ध नहीं है। हम राज्य और सिंहासनों के विषय में सोचते ही रहते हैं। एक हमारे लिये प्रतीक्षा करती रहती है, एक अपना काम करता जाता है और एक हमारी ताक में रहती है। पहिला है, बुढ़ापा दूसरा काल। तीसरी मृत्यु है।" बोधिसत्व ने कहा।

"ये बातें सुनकर मुझे जीवन से घृणा-सी होने लगी है। मुझे राज्य नहीं चाहिये। मैं तपस्या करूँगा। तुम मेरे बदले राज्य करो।" राजा ने कहा।

"जब मैंने सब कुछ छोड़ दिया है, तो इस राज्य की क्या जरूरत है!" बोधिसत्व ने कहा। वहाँ एकत्रित व्यक्तियों को जीवन के परमार्थ के बारे में उपदेश देने लगे। उनका उपदेश सुनने सारा नगर आया। कालक्रम से सबने सन्यास ले लिया और नगर उजड़-सा गया।

यह सुनते ही कि काशी के राजा ने सन्यास ग्रहण कर लिया है एक और राजा उनके पास आया। उसके साथ उसकी प्रजा भी आई। उन सबने सन्यास ले लिया। इस तरह तीन राज्य उजड़ गये। वहाँ के जन्तु सब जँगली जानवर हो गये। उन नगरों की सम्पत्ति का मूल्य मिट्टी का भी न रहा।

[१२]

[पिंगल के भाइयों ने पैसा तो आपस में बाँट लिया पर उन दोनों में जादू के थैले के बारे में झगड़ा हो गया। यह बात राजा को जब माल्म हुई तो उसने उन दोनों को जेल में डलवा दिया। पिंगल वाले जहाज और एक और जहाज में, बीच समुद्र में युद्ध शुरू हो गया। कप्तान ने गुलामों को छोड़कर उन्हें हथियार दिये। बादमें :]

कप्तान की आज्ञा के अनुसार जँजीरों में बँधे गुलाम छोड़ दिये गये। उनमें से हरेक को तलवार, भाले दे दिये गये। उस समय कप्तान ने जाने कहाँ का प्रेम दिखाते हुये कहा—"तुम इस समय से गुलाम नहीं हो। योद्धा हो। हमारा जहाज़ खतरे में है। अगर हम उस जहाज़ के आदमियों के आधीन हो गये, जो हमें पकड़ने की कोशिश कर रहे हैं, हमें जिन्दगी भर उनकी गुलामी करनी होगी। और अगर हम जीत गये तो सब आराम से जीवन व्यतीत कर सकेंगे। इसलिये प्राण रक्षा के लिए, स्वतन्त्रता के लिए, जी जान से लड़ो।"

कप्तान की बात पर गुलामों को विश्वास न हुआ। उनमें से हरेक को याद था, कि उसने उन पर कैसे कैसे जुल्म ढाये थे, किस क्रूरता से उन पर अत्याचार किया

था। परन्तु उस मौके पर उन्हें क्या करना चाहिये था? दुश्मन का जहाज़ पास आता जाता था। उसमें से निरन्तर बाण और विस्फोटक पदार्थ उनके जहाज़ पर गिर रहे थे। अगर उनका जहाज़ जल जला गया तो जहाज़ के साथ वे भी जलमग्न हो जायेंगे।

ये सन्देह, जो गुलामों के दिलों में बुल बुला रहे थे, पिंगल के मन में भी उठ रहे थे। परन्तु तुरत उसने एक निश्चय कर लिया। यह जरूरी था कि जहाज़ को डूबने से बचाया जाय। परन्तु क्रूर कप्तान का जीते रहना खतरनाक था। पहिले उसका काम तमाम करना होगा। फिर मौका देखकर शत्रु जहाज़ के व्यक्तियों से सुलह-समझौता करके अपनी राह पर जाना होगा।

पिंगल ने यह सोचकर, साथ के गुलामों को भी बताया कि क्या करना चाहिये था। उसने उनसे कहा कि शत्रु पोत की बात बाद में सोची जा सकती है, पहिले अपने जहाज़ के कप्तान और उसके समर्थकों को खतम करने में हमारा भला है। सब गुलाम इसके लिए मान गये। युवक, बुद्धिमान, साहसी पिंगल को उन्होंने अपने सरदार के रूप में स्वीकार किया।

पिंगल झट, भयंकर आवाज़ में गरजता हुआ—"कप्तान, और उसके आदमियों को मार दो। चलो" आगे बढ़ा।

गुलाम सब एक साथ कप्तान और उसके साथियों पर तलवार लेकर कूदे, जो उन्हें तरह तरह से सताते आ रहे थे। कप्तान ने अनुमान न किया था कि परिस्थिति इतनी विषम हो जायेगी। उस समय उसी के जहाज़ के गुलामों ने उस पर तलवार खींची।

कप्तान के पास सोचने के लिये समय न था। इससे पहिले कि वह अपने साथियों से कुछ कहता, गुलाम उसके टुकड़े टुकड़े कर रहे थे।

"बल्बा, भोखा, पहिले इन गुलामों को यम के पास पहुँचाओ।" कप्तान यह कहता गुलामों पर कूदा। बलवान, कप्तान ने चुटकी भर में पाँच छः गुलामों को तल्वार का शिकार बना दिया। यह देख कई गुलाम डर के कारण पीछे हट गये।

पिंगल यह खतरा ताड़ गया। तुरत वह तल्वार लेकर कप्तान की ओर बढ़ा। उसने गुलामों से कहा—"कप्तान को एक क्षण में अपनी तल्वार को बलि दूँगा। अगर तुम मौत से डर कर भागे भी तो समुद्र तुम्हें अवश्य निगलकर रहेगा। अपनी स्वतन्त्रता के लिए निर्भय होकर लड़ो।"

पिंगल की बात सुनकर भागते गुलामों का ढाढस बँधा। इस बीच, सिंह की तरह गरजता वह कप्तान का मुकाबला करने लगा। उसकी पहिली चोट के कारण पिंगल की तलवार कप्तान के सीने को चीरती हुयी निकल गई। कप्तान "जय भैरवी" चिल्लाता, सीने पर हाथ रखकर, आँखें लाल कर, पिंगल पर तलवार लेकर झपटा।

कप्तान का बल, तलवार चलाने में निपुणता देख पिंगल तुरत एक तरफ़ हट गया। कप्तान की चोट पिंगल तक न पहुँची। उसका पैर पास पड़ी रस्सी में फँस गया और वह आगे गिर गया। इसतरह पिंगल को अच्छा मौका मिला। उसने जोर से चिल्लाते हुये कप्तान की पीठ में तलवार गाड़नी चाही। परन्तु कप्तान, खतरा जानकर एक तरफ़ लुढ़क गया।

पिंगल की तल्वार वहाँ पड़े शहतीर पर जा लगी और उसके फौरन दो टुकड़े हो गये।

कप्तान ने अट्टहास किया। "ओहो! शायद तुम गुलामों के सरदार हो। सरदार कैसी आफ़त में फँस गया है! हम तल्वार से तेरे टुकड़े टुकड़े करके तुझे समुद्र में फेंक देंगे। फिर तेरे साथियों को.... ।"

कप्तान गुस्से से अन्धा था। वह यह न देख सका कि पिंगल क्या कर रहा था। तल्वार टूटते ही जान गया था कि वह खतरे में था। दूसरी तलवार कहीं आस पास न थी। उसके साथी गुलाम, कप्तान के साथियों से लड़ रहे थे।

पिंगल, बिजली की तरह लपका और उसने पास पड़ी एक रस्सी ले ली। उससे एक फन्दा बनाया। कप्तान का मुकाबला करने के लिए तैयार हो गया। जब कप्तान, मानों गुस्से के नशे में आगे बढ़ा तो पिंगल ने हाथ की रस्सी घुमा फिराकर उसके गले में डाल दी। फंदा कस दिया। तुरत पिंगल रस्सी लपेटता पीछे की ओर भागा।

कप्तान, हाय हाय करता सामने की ओर गिरकर अपने हाथ की तलवार से रस्सी को काटने का प्रयत्न करने लगा। यह देख, पिंगल ने पीछे मुड़कर अपने साथियों को बुलाया। तुरत दो गुलाम भागे भागे आये। कप्तान को नीचे पड़ा देख, उस पर लपक कर, उसे तलवारों से उन्होंने बुरी तरह मारा।

जब तक कप्तान मर न गया तब तक पिंगल यह न जान सका कि उसके चारों ओर क्या हो रहा था। वह एक गुलाम के हाथ से तलवार लेकर जहाज़ के उस कोने में गया जहाँ लड़ाई हो रही थी। उसके वहाँ गये थोड़ी देर ही हुई थी कि या तो कप्तान के साथी मारे गये, नहीं तो ज़ख्मी किये गये, नहीं तो पकड़ लिये गये। वे पूरी तरह जीत गये थे।

इस बीच, शत्रु जहाज़ के सैनिक, कोलाहल करते पिंगल के जहाज़ के पास आ रहे थे। वे लगातार बाण छोड़ते आते थे। वे सोच रहे थे कि उनके दुश्मन जहाज़ में कोई दंगा शुरू हो गया था और उसे पकड़ने का यही अच्छा मौका था।

पिंगल न सोच सका कि क्या किया जाय! उस शत्रु पोत का सामना करना, उसके थोड़े से साथियों की बस की बात न थी और अगर उनके सामने घुटने टेक भी दिये तो वे उन्हें फिर पकड़ सकते हैं और उनको गुलाम बना सकते हैं। शत्रु-पोत में आखिर सैनिक कितने हैं? वह सहसा कुछ निर्णय न कर पाया।

पिंगल ने कप्तान की दुर्बीन छीनकर, उससे शत्रु-पोत की ओर देखा। जहाज़ में नाविक भरे पड़े थे। पिंगल जान गया कि उनसे लड़ने से कोई फ़ायदा न था। उसने निश्चय किया कि पहिले अपने जहाज़ में सफ़ेद झण्डा उठाया जाय फिर सन्धि करके अपने अपने रास्ते चला जाना ही श्रेयस्कर था।

पिंगल ने सोचा कि शत्रु-पोत से अपने जहाज़ को दूर रखा जाय, शत्रु को जहाज़ में न आने दिया जाय और समझौता चलाया जाय। तुरन्त उसकी आज्ञा के अनुसार मस्तूल पर सफ़ेद झण्डा फहराया गया। उसी समय शत्रु-पोत से विजय ध्वनि सुनाई पड़ी।

पिंगल ने भोंपा लेकर चिल्ला चिल्लाकर, शत्रु पोतवालों को वह सब बताया जो उसके जहाज़ में गुज़रा था।

"तुम्हारे जहाज़ के रास्ते में आकर उसको पकड़ने का हममें से किसी ने प्रयत्न न किया था। हम गुलामों ने ज़ालिम कप्तान और उसके साथियों को मार दिया है। हम अब सिर्फ़ यही चाहते हैं कि हम अपने जहाज़ को एक बन्दरगाह में ले जायें और वहाँ से अपने अपने देश चले जायें। इसलिए आप हमारे काम में दखल न दीजिये और हम आप से यह प्रार्थना करते हैं कि आप अपने रास्ते

चले जायें। हम पर आक्रमण न कीजिये" पिंगल ने कहा।

यह सुनते ही शत्रु-पोत में खलबली मच गई। कुछ देर बाद भयंकर अवाज़ में यह सुनाई दिया।

"तुम गुलामों को समुद्र में जहाज़ चलाने का हक नहीं है। इसके अलावा, मालिक और उसके साथियों को मारकर तुमने एक अक्षम्य अपराध किया है। इसके लिए तुम्हें दण्ड भुगतना ही पड़ेगा। नहीं तो तुम्हारी देखा देखी हमारे जहाज़ के गुलाम भी एक दिन बलवा कर सकते हैं और हम सब को मार सकते हैं। तुम जहाज़ का लंगर उतारो। बिना कुछ कहे हार मान लो।"

यह सुनकर पिंगल हैरान रह गया। वह यह जान गया कि वह व्यापारी जहाज़ न था, अपितु डाकुओं का ही जहाज़ था। यह बात साफ़ थी कि अगर उन्होंने उनके सामने हार मान ली तो उन सब को फिर गुलाम बनना होगा। फिर से पशु का जीवन व्यतीत करना होगा।

एक दो शब्दों में पिंगल ने अपने साथियों को सारी स्थिति समझा दी।

उनमें से हर कोई लड़ने के लिए तैयार था। उन्होंने एक कंठ से जवाब दिया कि फिर गुलाम होने से तो अच्छा समुद्र में डूबकर मरना था। गुलामी बुरी है। मौत ही भली।

तुरत मस्तूल पर से सफ़ेद झण्डा उतार दिया गया। जहाज़ में जय जय की ध्वनि प्रतिध्वनित होने लगी। अगर शत्रु, जो संख्या में बहुत अधिक थे। उनके जहाज़ में आ गये तो वे कुछ न कर सकते थे। इसलिए जितनी दूर सम्भव हो, उतनी दूर रह कर बाणों से

युद्ध करने और आवश्यकता पड़ने पर अपने जहाज़ को उस जहाज़ से टकराने का पिंगल ने निश्चय किया।

फिर युद्ध शुरू हो गया। पिंगल के साथी, शत्रु-पोत पर बाण छोड़ने लगे। पिंगल ने यह भी सोचा कि लड़ते लड़ते ही, यदि हो सका, तो वह अपने जहाज़ को दूर ले जायेगा। परन्तु थोड़ी देर में ही यह मालूम हो गया कि शत्रु-पोत से दूर भागना सम्भव न था। देखते देखते, बहुत वेग से शत्रु-पोत से एक नौका आने लगी। शत्रु सैनिक, उत्साहपूर्वक नारे लगाते चिल्ला रहे थे।

पिंगल ने झट एक निश्चय किया। वह यह था, विजय या स्वर्ग। इसके अतिरिक्त कोई और रास्ता न था। उसने साथियों को आज्ञा दी कि जहाज़ को जोर से चलाकर शत्रु-पोत से टकरा दें। जहाज़ आगे को बढ़ा। पहिले तो उन्हें आश्चर्य हुआ फिर पिंगल की चाल समझकर, शत्रु सैनिक भय से काँपने लगे। हाय हाय करने लगे।

जहाज़ को पीछे ले जाने की कोशिश की, पर वे सफल न हो सके। पिंगल तलवार हाथ में लेकर अपने साथियों से जल्दी जहाज़ को टकराने के लिए कह रहा था। देखते देखते जहाज़ तेज़ी से आगे बढ़ा और शत्रु-पोत से टकरा गया। झट मानों हज़ारों गलों से आर्तनाद निकला। समुद्र गूँज उठा। दोनों जहाज़ों के टकराने से पिंगल अपनी जगह से उछाल दिया गया और वह समुद्र में जा गिरा।

(अभी और है)

SATYAM

भक्त और दार्शनिक

विक्रमार्क ने जिद न छोड़ी। वह फिर पेड़ के पास गया, पेड़ से शव उतारकर कन्धे पर डालकर चुप चाप श्मशान की ओर चला। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा! इस अन्धेरी रात के समय तुम बहुत कष्ट उठारहे हो। तेरी थकान मिटाने के लिए एक छोटी कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यह कहानी सुनानी शुरु की।

किसी जमाने मे सुबुद्धि नाम का एक दार्शनिक रहा करता था। सिवाय दर्शन के उसको किसी चीज़ में दिलचस्पी न थी। उसने शादी भी न की थी। काशी में ही रहा करता। दर्शन ग्रन्थों का अध्ययन करता और स्वयँ भी ग्रन्थ लिखता।

वंगदेश से कृष्णदास नाम का एक व्यक्ति अपनी लड़की के साथ काशी आया। कुछ

बेताल कथाएँ

दिन पहिले ही कृष्णदास की पत्नी गुजर गई थी। उसकी अस्थियाँ गँगा में मिलाने के लिए वह अपनी लड़की के साथ आया था। वह और उसकी लड़की सुबुद्धि के घर के पासवाली धर्मशाला में ठहरे।

कृष्णदास जिस काम पर आया था, वह खतम हो गया। वह घर जाने को तैयार हो रहा था कि उसे यकायक कोई बीमारी हो गई। धर्मशाला में चिकित्सा की कोई सुविधा न थी। सुबुद्धि को यह पता लगा। उसने धर्मशाला में जाकर उससे कहा कि वह अपनी लड़की के साथ उसके घर में रहे और अपना इलाज करवाये। उसने वैसा ही किया।

सुबुद्धि ने एक वैद्य को बुलवाया। उसकी दवा ने सुबुद्धि पर अच्छा असर किया। थोड़े दिनों में ही बीमारी कम होने लगी।

इस बीच सुबुद्धि ने कृष्णदास और उसकी लड़की सुगुणा के बारे में बहुत कुछ मालूम कर लिया था। कृष्णदास बहुत बड़ा भक्त था। वह हमेशा भगवान का ध्यान करता रहता। सुगुणा को पिता पर बहुत प्रेम था। उसका स्वभाव बहुत अच्छा था। सुबुद्धि ने कभी स्वप्न में भी न सोचा
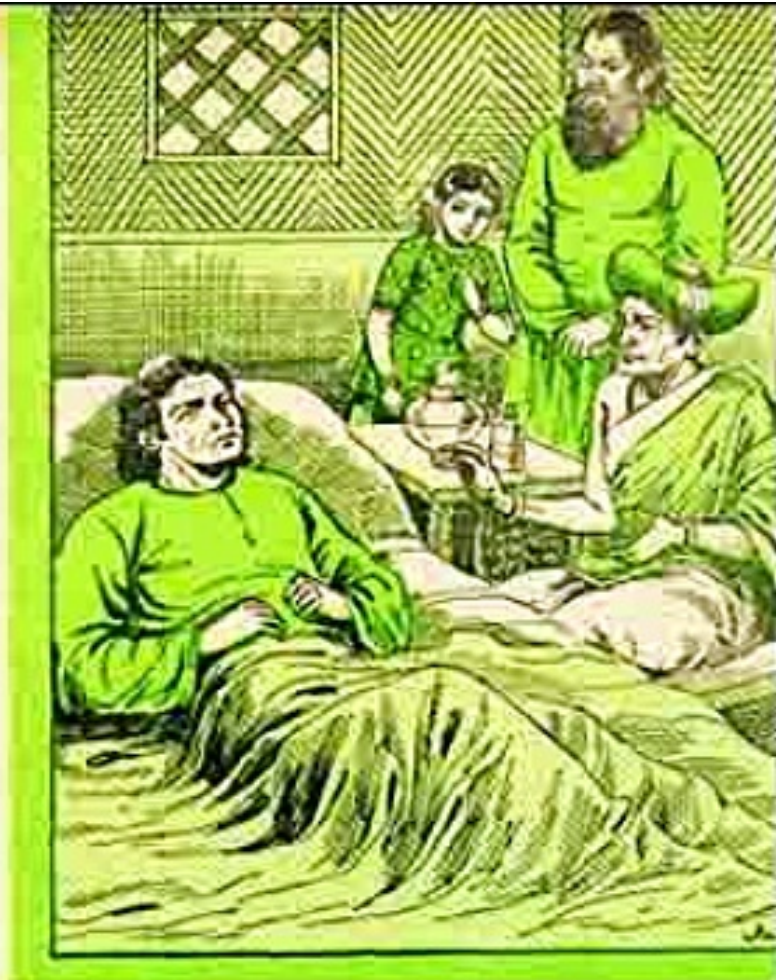
था कि वैसी स्त्रियाँ भी इस संसार में थीं। उस सुबुद्धि ने भी जिसने कभी गृहस्थी न चाही थी, सोचा क्या अच्छा होता अगर उसके भी सुगुणा जैसी लड़की होती।

कृष्णदास जबसे थोड़ा बहुत उठने-बैठने लगा था, तभी से प्रार्थना ध्यान वगैरह करने लगा था।

"भगवान की मुझ पर कितनी ही कृपा है। अगर उसकी कृपा हम पर न हो तो हमारे जीवन क्या हो जायेंगे। इस महान सृष्टि में हमारा अस्तित्व ही कितना है! हमारे जीवन तभी सार्थक हो सकते

हैं, जब कि भगवान की हम पर कृपा हो। मेरी पत्नी का निधन मेरे लिये कितना ही बड़ा धक्का है। पत्नी और लड़की के सिवाय इस संसार में मेरा और कोई नहीं है। ईश्वर की अनुकम्पा थी, तभी मैं उसकी मृत्यु के दुःख को झेल सका। उसीने मुझे शक्ति दी।" कृष्णदास ने कहा।

कृष्णदास जब इस प्रकार की बातें करता और पिता पुत्री जब मिलकर प्रार्थना करने लगते तो किसी न किसी बहाने सुबुद्धि घर से बाहर चला जाता।

पहिले कृष्णदास को सुबुद्धि का व्यवहार कुछ समझ में न आया। परन्तु बाद में पता लगा कि वह नास्तिक था। उसे ईश्वर में विश्वास न था। उसने अपनी लड़की से कहा—"बेटी, यद्यपि यह सुबुद्धि नास्तिक है तो भी बड़ा योग्य है। नास्तिकों में योग्य हैं और अयोग्य भी। ऐसे भी कई नास्तिक हैं, जो बहुत ज्ञानी हैं। यह बात मैने कई बार देखी है।"

सुबुद्धि कृष्णदास से साधारण विषयों पर बातचीत किया करता। दर्शन पर कभी भूलकर भी कुछ न कहता। परन्तु

कृष्णदास अपनी भक्ति के बारे में प्रायः कुछ न कुछ कहता रहता।

"मुझे और मेरी लड़की को संगीत का बड़ा चाव है। आपने बताया कि आपको संगीत पसन्द नहीं है। भक्ति भी कुछ ऐसी है। उसका आनन्द जो जानते हैं, उसके बगैर वे अपना जीवन व्यर्थ समझते हैं।" कृष्णदास कहा करता।

परन्तु इसप्रकार की चर्चा से सुबुद्धि में कोई परिवर्तन न हुआ।

एक दिन कृष्णदास ने सुबुद्धि से कहा—"ईश्वर की कृपा से मैं फिर स्वस्थ हो गया हूँ। हम अब अपने गाँव चले जायेंगे। आज्ञा दीजिये।"

"अभी आप यात्रा करने लायक तन्दुरुस्त नहीं हुये हैं। थोड़ा बल आने पर जा सकते हैं।" सुबुद्धि ने कहा।

"नहीं, जाना ही होगा। हमारे गाँव वाले मेरी प्रतीक्षा में रोज गिन रहे होंगे।" कृष्णदास ने कहा।

"आपका इस हालत में अकेला जाना, मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं है। चलिये मैं भी आपके साथ चलता हूँ। मैं रास्ते में आपकी मदद तो कर ही सकूँगा, इसतरह

मैं बँगदेश भी देख लूँगा। मैंने कितने ही राज्य देखे पर आपका देश अभी तक नहीं देखा है।" सुबुद्धि ने कहा।

इसके लिए पिता, पुत्री सहर्ष मान गये। कुछ दिन यात्रा करके वे तीनों कृष्णदास के गाँव पहुँचे।

यह जानकर कि कृष्णदास वापिस आ गया है, कितने ही ग्रामवासी उसे देखने आये। ग्रामवासियों का कृष्णदास के प्रति गौरव-आदर देखकर सुबुद्धि को बहुत आश्चर्य हुआ।

पाँच दस ने उससे उसकी पत्नी की मृत्यु पर सहानुभूति प्रकट की।

"भाइयो, यह सब भगवान की दया है।" कृष्णदास ने उन सबसे कहा।

इतने में शाम हो गई। भजन का समय हो गया।

"अगर आपको कोई आपत्ति न हो तो आप भी भजन में शामिल हो सकते हैं। नहीं तो इधर उधर टहल आइये। आपने सुगुणा को खुलकर गाते कभी नहीं सुना है। सुनना चाहें तो सुन सकते हैं।" कृष्णदास ने सुबुद्धि से कहा।

"अच्छा, मैं सुनूँगा, आप अपना भजन शुरु कीजिये।" सुबुद्धि ने कहा।

ग्रामवासियों ने भजन शुरू किया। सुगणा ने भी गाया। सब की आवाज में उसकी आवाज तम्बूरे के समान ऊँची और मधुर सुनाई दी।

सुबुद्धि को भी, जिसको संगीत कभी मधुर न लगा था, उसका गीत सुनकर बहुत प्रसन्नता हुई।

थोड़े दिन वहाँ रहकर, सुबुद्धि काशी के लिए वापिस निकला।

"जब कभी आपको मौका मिले आप जरूर हमारे ग्राम आते रहिये। हम आपको रोज याद किया करेंगे।"

कृष्णदास और सुगुणा ने सुबुद्धि से यह कई बार कहा।

सुबुद्धि काशी वापिस आ गया। सप्ताह और मास बीत गये। इस बीच, उसको कई बार, कृष्णदास और सुगुणा को देखने की इच्छा हुई। पर यह सोचकर कि वह इच्छा अनुचित है, उसको दबाये रखा।

इतने में, सुबुद्धि को एक निमन्त्रण पत्र मिला। सुगुणा का विवाह होने वाला था। दुल्हा किसी राजा के यहाँ नौकर था। विवाह बहुत पहिले ही तय हो चुका था। सुगुणा भी उसको बहुत चाहती थी।

यह निमन्त्रण पत्र मिलते ही सुबुद्धि निकल पड़ा। फिर सुगुणा को देखने जा रहा हूँ, यह सोचकर उसमें आनन्द का ज्वार-सा आ गया।

सुबुद्धि अभी कृष्णदास के गाँव पहुँचा न था कि अन्धेरा हो गया। पर सौभाग्यवश उस रास्ते एक और आदमी जा रहा था। उसने कहा कि वह उसे, उस गाँव तक पहुँचा देगा।

ग्राम के श्मशान में उन्हें एक शव जलता दिखाई दिया।

"लगता है कोई मर गया है।" सुबुद्धि ने अपने साथ वाले से कहा।

"कृष्णदास की लड़की विचारी मर गई है। विवाह के बारे में बात तय हो गई थी कि इतने में खबर मिली कि वर मर गया है। यह खबर मिलते ही विचारी लड़की के हृदय की धड़कन बन्द हो गई और मर गई।" साथ के आदमी ने कहा।

सुबुद्धि का सिर चकरा गया। उसका हृदय भी रुक-सा गया। तैरता-सा वह कृष्णदास के घर पहुँचा।

उसके चारों ओर ग्रामवासी बैठे थे। उनमें से कई रो रहे थे। कृष्णदास उनको

आश्वासन देता कह रहा था—"यह सब ईश्वर की कृपा है। हमारे हाथ में क्या है! रोना नहीं चाहिये।"

उसकी दृष्टि सुबुद्धि पर पड़ी। "अरे भाई आ गये! सुगुणा का विवाह हो गया। भगवान ने उसको अपने पास बुला लिया है।" उसने कहा।

सुबुद्धि अपना दुख न रोक सका। वह जोर जोर से सुगुणा के लिए रोने लगा। जब उसने यह सोचा कि वह कितनी प्रतीक्षा के बाद, कितने उत्साह से सुगुणा को देखने आया था तो उसका दुख और भी अधिक हो गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा, मुझे एक सन्देह है। इतना दार्शनिक होते हुये भी सुबुद्धि क्यों रोया? वह कृष्णदास जो क्षण क्षण पर पत्नी और पुत्री का नाम लेता था क्यों नहीं रोया? अगर उत्तर जानबूझकर न दिया तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।

"दर्शन को अगर आचरण में लाना है तो आदमी को अपने सहज स्वभाव को नष्ट करना होता है। परन्तु वह पूरी तरह नष्ट नहीं होता। कभी न कभी मौका पाकर वह संयम से बाहर हो ही जाता है। भक्ति ऐसी नहीं है। भक्त सब प्रकार के सुख अनुभव करता यह सोचता है कि वह सब भगवान की कृपा है। कष्ट भी झेलता है तो इस विश्वास से कि उन्हें भी भगवान ने दिया है। इस विश्वास से उनको झेलने की शक्ति आ जाती है। दार्शनिक में न सुख पाने की शक्ति होती है न कष्ट झेलने की ही। इसलिये दार्शनिक सुबुद्धि रोया और भक्त कृष्णदास नहीं रोया," विक्रमार्क ने कहा।

राजा का इसप्रकार मौनभंग होते ही, शव के साथ बेताल अदृश्य हो गया।

अलीबाबा

(गतांक से आगे)

इस बीच डाकू अपनी गुफ़ा में वापिस गये। उनके आश्चर्य की सीमा न रही जब उन्होंने देखा कि कासिम का शव वहाँ न था। वे यह भी जान गये कि सोने की कुछ और थैलियाँ गायब थीं।

"लगता है हमारा रहस्य किसी ने मालूम कर लिया है। जिसको हमने मारा है, उसका कोई साथी होगा। वह ही शव और सोना ले गया है। इसमें कोई सन्देह नहीं है। अगर हमने यह नहीं मालूम किया कि वह आदमी कौन है हम पर जरूर आफ़त आयेगी। इसलिए तुममें से किसी अक़्लमन्द को यात्री का वेष बनाकर शहर जाना होगा। यह मालूम करना होगा कि लोग, जिस आदमी को हमने मारा है उसके बारे में क्या कह रहे हैं। उसका पता, ठिकाना, नाम वगैरह क्या है मालूम करना होगा। अगर जानेवाले ने धोखा देना चाहा तो हम सब पर आफ़त आ सकती है। इसलिए जो इस काम पर भेजा जायेगा अगर वह बिना किये आया तो उसको मौत की सज़ा दी जानी चाहिये, यह मेरा ख्याल है।" डाकुओं के सरदार ने कहा।

इस विषय पर बात चलने से पहिले, एक चोर ने आकर कहा—"यह शर्त मानकर मैं इस काम पर जाऊँगा। अगर मुझे औरों के लिए मरना भी पड़े तो मुझे कोई एतराज नहीं है!"

डाकुओं के सरदार और डाकुओं ने उसकी खूब प्रशंसा की। फिर उसने अपना वेश इस तरह बदल लिया कि उसे कोई पहिचान न

श्री सुमन कुमार जोशी

सका। वह उसी दिन रात को निकल गया और बड़े लड़के शहर में पहुँच गया। जब वह गलियों में घूम-फिर रहा था तो उसे बाबा मुस्ताफ़ा की दुकान दिखाई दी। दूसरों के दुकान खोलने से पहिले अपनी दुकान खोलने की उसकी आदत थी।

बाबा मुस्ताफ़ा तभी अपना काम शुरु करनेवाला था। डाकू दुकान में गया। बाबा मुस्ताफ़ा को सलाम करके उसने कहा—"क्यों दादा! तुम्हें तो दिन में ही ठीक तरह नहीं दिखाई देता है, फिर सवेरे सवेरे ही क्यों काम शुरु कर दिया है! इस कम रोशनी में क्या तुम्हें कुछ दीखता है!"

"तुम मेरी बात नहीं जानते! मैं बूढ़ा हो गया हूँ पर नज़र बिल्कुल ठीक है। और तो और मैंने इससे कम रोशनी में भी एक शव को सिया है!" बाबा मुस्ताफ़ा ने कहा।

"शव को....!" डाकू ने आश्चर्य का अभिनय करते हुये पूछा।

"हाँ, हाँ, यह न सोचना कि मैं सारी कहानी सुना दूँगा....नहीं, मैं वह न करूँगा!" मुस्ताफ़ा ने कहा।

डाकू को विश्वास हो गया, जिस जानकारी की खोज में वह आया था, वह उस बूढ़े से प्राप्त की जा सकती थी। उसने एक सोने की दीनार बाबा मुस्ताफ़ा के हाथ में रखते हुए पूछा—"दादा! तुम्हारे रहस्यों की मुझे क्या जरूरत है! तुम तो बावले-से हो, भला मुझे कोई भी रहस्य बताने में क्या हानि है! मैं तो सिर्फ यह जानना चाहता हूँ कि यह शव तुमने किस घर में सिया था। वह मुझे दिखाओ, बस!"

"अगर मैं वह घर तुम्हें दिखाना भी चाहूँ तो भी मैं नहीं दिखा सकता। मुझे

एक जगह ले जाकर, मेरी आँखें बाँध दी गईं। फिर आँखें बन्द कर वहीं छोड़ गये। इसलिए वह घर तुम्हें मैं नहीं दिखा सकता!" बूढ़े ने कहा।

"मानो अगर तुम्हें उस जगह ले जाऊँ जहाँ तुम्हारी आँखें बन्द कर दी गई थीं तो उस घर तक तुम जा सकोगे कि नहीं। यह करके तो देखो। तुम्हारा एहसान न रखूँगा, यह लो दीनार!" डाकू ने बाबा मुस्ताफ़ा को दीनार दी।

बूढ़े ने दो मुहरों को बहुत देर तक देखा। वे उसे अच्छी लगीं। उन्हें जेब में उसने रखते हुए कहा—"कोशिश करूँगा, पर मैं वचन नहीं दे सकता।"

बाबा मुस्ताफ़ा डाकू को एक जगह ले गया। "यहीं मेरी आँखों पर पट्टी बाँधी गई थी। फिर....मुझे इस तरफ़ ले जाया गया!" उसने कहा।

डाकू ने बूढ़े के आँखों पर अपना रुमाल बाँध दिया। फिर बूढ़ा डाकू को ठीक कासिम के घर ले गया, जैसे उसे सारा रास्ता ठीक ठीक याद हो। डाकू ने उस घर के दरवाजे पर निशान लगाकर बाबा मुस्ताफ़ा की आँखें खोलीं। डाकू ने उससे पूछा—"जानते हो, यह घर किसका है!"

"मैं इस मोहल्ले में नहीं रहता, इसलिये मुझे नहीं मालूम।" बूढ़े ने कहा। अब चूँकि बूढ़े से कुछ मालूम न करना था। इसलिए, डाकू उससे विदा लेकर अपने साथियों से मिलने जंगल में चला गया।

डाकू और बाबा मुस्ताफ़ा के चले जाने के बाद मोर्गियाना आई। वह किसी काम पर बाहर गई हुयी थी। उसने दरवाजे पर निशान देखा।

"यह निशान क्या हो सकता है। लगता है कोई मेरे मालिक का नुक्सान

करने की सोच रहा है। कुछ भी हो पहिले बुरा सोचना अच्छा है, बजाय भले के।" यह सोच मोर्गियाना अन्दर गई और एक खड़िया लेकर वह आस पास के घरों के किवाड़ों पर भी वैसा निशान लगा आई। यह उसने अलीबाबा को न बताया।

इस बीच, डाकू अपने साथियों के बीच पहुँच गया....और अपनी सफलता की शेखी बघारने लगा, सबने उसको बधाई दी फिर चोरों के सरदार ने अपने आदमियों से कहा—"भाइयो! हमें देरी नहीं करनी चाहिये। वेश बदलकर, हथियार लेकर, हमें नगर में पहुँच जाना चाहिये। अगर हम सब मिलकर गये तो लोगों को शक होगा। इसलिये हम दो दो मिलकर जायें और शहर के चौक में मिलें और मैं और हमारा साथी, जो घर पर निशान लगाकर आया था, साथ जायेंगे और जाकर देखेंगे कि वहां क्या हालत है.... तब सब मिलकर सोचेंगे कि हमें क्या करना चाहिये।

डाकू दो दो की टोलियाँ बनाकर एक के बाद एक, भिन्न भिन्न रास्तों से शहर पहुँचे ताकि किसी को किसी प्रकार का

संदेह न हो। सरदार और घर का निशान लगानेवाला डाकू, सब के बाद निकले और उस गली में पहुँचे, जहाँ अलीबाबा रहा करता था। मोर्गियाना ने जिन घरों पर निशान लगाया था, उन में से आखिरी घर देखकर डाकू ने कहा—"यही वह घर है, जिस पर मैंने निशान लगाया था।"

"परन्तु इसके बगलवाले घर के किवाड़ पर भी इसी प्रकार का निशान लगा हुआ है।" डाकुओं के सरदार ने कहा—"वे इस दुविधा में थे कि उन दोनों में से कौन-सा घर था कि उनको कई और घर भी दिखाई दिये, जिस पर वैसे ही निशान लगे हुये थे। वह डाकू घबरा गया, जिसने निशान लगाया था। उसने प्रतिज्ञा करके कहा कि वह एक घर के किवाड़ पर ही निशान लगाकर गया था। किसी और ने ये निशान लगाये होंगे।

डाकुओं का प्रयत्न विफल रहा। चौक में वे और डाकुओं से मिले। सरदार ने उन्हें बताया कि तब कुछ नहीं किया जा सकता था। वे सब मिलकर फिर जंगल में चले गये।

जो डाकू घर खोजने गया था उसने कहा कि उसे मृत्यु दंड दिया जाये।

उसका सिर धड़ से उड़ा दिया गया। उसका काम पूरा करने के लिए एक और साहसी सामने आया।

उसने जाकर बाबा मुस्ताफ़ा को खूब घूँस दी और उससे वह घर मालूम कर लिया, जिसमें अलीबाबा रहा करता था। वह घर पर एक ऐसी जगह लाल निशान लगाकर चला गया, जो सबको आसानी से नहीं दीखता था।

मोर्गियाना की आँखें बहुत तेज़ थीं। उसने वह लाल निशान देख लिया। वह और घरों पर भी लाल निशान लगा आई।

डाकुओंने सोचा कि इस बार उनका काम चल जायेगा। पहिली बार जैसे वे आये थे दूसरी बार भी उसी तरह शहर में पहुँचे ताकि किसी को कोई सन्देह न हो। जिस डाकू ने लाल निशान लगाया था, उसको लेकर डाकुओं का सरदार अलीबाबा की गली में गया। जब उन्होंने बहुत से घरों पर निशान देखा, तो वे निराश हो गये। वे कर ही क्या सकते थे! वे वापिस चले गये क्योंकि इस बार भी उनका प्रयत्न असफल रहा था। इसलिए दूसरे चोर का भी सिर काट दिया गया।

जब दो दिलेर डाकू इस तरह मारे गये तो सरदार ने सोचा कि इस तरीके से काम न बनेगा। इस बार वह स्वयं बाबा मुस्ताफ़ा के पास गया। इस बार भी बाबा मुस्ताफ़ा ने मदद की। उस बूढ़े की मदद से सरदार अलीबाबा के घर के सामने जा खड़ा हुआ। परन्तु उसने उस घर पर कोई निशान न लगाया। गली में इधर उधर घूम कर उसने अच्छी तरह याद कर लिया कि वह घर कहाँ था। फिर वह वापिस जँगल चलागया।

“ आओ इस बार मैं उस घर को अच्छी तरह देख कर आया हूँ। अब कोई गल्ती न होगी। हम अपना बदला निकाल सकेंगे। मैंने उसके लिए एक चाल सोची है। सुनो। अगर तुम में से किसी को इससे अच्छी चाल सूझे तो बताओ, सुनूँगा।” सरदार ने कहा। उसने अपनी चाल भी सुनाई। उसके साथियों ने उस चाल का आमोदन किया।

फिर डाकू आस पास के गाँवों में गये। अठ्ठारह खच्चर और अड़तीस चमड़े के थैले खरीदे गये। एक थैले में तेल डाल दिया। बाकी सेंतीस थैलों में सेंतीस डाकू हथियार लेकर बैठ गये। डाकुओं के सरदार ने उन थैलों के ऊपरवाले हिस्से में तेल डाला।

डाकुओं के सरदार ने तेल के व्यापारी का वेश पहिना। अड़तीस थैलों को अठ्ठारह खच्चरों पर लादकर उन्हें हाँकता, अन्धेरे के समय शहर में पहुँचा और जब उन खच्चरों को हाँकता हाँकता अलीबाबा की गली में गया तो और भी अन्धेरा हो गया था। अलीबाबा भोजन करके घर के बाहर खड़ा खड़ा हवा खा रहा था।

डाकुओं के सरदार ने अलीबाबा के पास जाकर कहा—“मैं तेल का व्यापारी हूँ। बहुत दूर से आ रहा हूँ। कल पेंठ में तेल बेच दूँगा। बहुत देर हो गई है। आज रात को कहाँ ठहरा जाय, कुछ मालूम नहीं। अगर आपको कोई दिक्कत न हो तो रात भर मुझे अपने घर में रहने दीजिये। आपका उपकार कभी न भूलूँगा।

अलीबाबा ने डाकुओं के सरदार को जँगल में देखा था। आवाज भी सुनी थी। परन्तु वह उसको न पहिचान सका—“इसमें क्या है? आइये।” कहते

हुए अलीबाबा ने दरवाजा खोला। डाकुओं के सरदार और उसके खच्चरों को अन्दर आने दिया।

अब्दुल्ला नाम के गुलाम ने खच्चरों पर से थैले उतारे और खच्चरों को उस जगह ले गया जहाँ और खच्चर बँधते थे। उनको दाना पानी दिया। मोर्गियाना ने अतिथियों के लिए फिर खाना बनाया। सरदार के भोजन करने के बाद अलीबाबा ने मोर्गियाना से कहा—"देखो, हमारे मेहमान को किसी प्रकार की कमी न हो। मैं कल सवेरा होने से पहिले ही स्नानागार जाऊँगा। मेरे कपड़े वगैरह अब्दुला को दे देना। मैं जब स्नान करके वापिस लौटूँ तो मेरे भोजन के लिए शोरवा आदि बनाकर रखना।" यह कहकर चलागया।

इस बीच सरदार ने बाहर आहाते में पड़े थैलों का ढक्कन हटाकर कहा—"जब मैं खिड़की में से पत्थर फेंकूँ, तब बाहर आना, मत भूलना।" उसने थैलों में बन्द डाकुओं का नाम ले लेकर कहा।

उसके घर में आते ही मोर्गियाना ने उसके सोने की जगह देखी। मालिक के कपड़े निकाल कर रखे। अब्दुल्ला से शोरवा बनाने के लिए चूल्हा जलाने के लिए कहा। चूल्हे के जलते ही वह शोरवा बनाने लगी। परन्तु बनाते बनाते दिये में तेल खतम हो गया और वह बुझगया।

"रसोई पूरी नहीं हुयी है, बीच में दिया बुझगया है। घर में एक बून्द भी तेल नहीं है। क्या किया जाय?" मोर्गियाना ने पूछा।

"इस व्यापारी के थैलों में तेल भरा पड़ा है। जा कुछ ले आ। क्या बिगड़ता है?" अब्दुला ने कहा। (अभी और है)

वर का प्रभाव

एक गाँव में दो स्त्रियाँ रहा करती थीं। उनमें से एक बड़ी पैसेवाली थी पर कंजूस थी। उसका हृदय भी बहुत कठिन था।

दूसरी स्त्री बहुत गरीब थी। पर बहुत अच्छी थी। उसका हृदय मक्खन की तरह था।

दोनों स्त्रियों के घर एक दूसरे से सटे हुए थे।

एक दिन शाम को एक भिखारी उस गली से जा रहा था। जाते जाते उसने पैसेवाली स्त्री के घर का किवाड़ खटखटाया। उस स्त्री ने किवाड़ खोला और भिखारी को खड़ा देखकर फिर एकदम बन्द कर दिया। उसके मुख से इतना भी नहीं निकला—"जाओ और कहीं देखो!"

दो चार कदम आगे बढ़कर भिखारी ने गरीब स्त्री के घर के दरवाज़े को खटखटाया। उसने दरवाजा खोलकर भिखारी को देखा। यद्यपि उसका पेट ही नहीं भरा था, तो भी उसने अन्दर जाकर एक रोटी का टुकड़ा लाकर भिखारी को देकर कहा—"यह खाकर जरा मठ्ठा पी लेना। देरी हो रही है, चाहते हो तो यहाँ सो जाओ। आराम करो।"

भिखारी ने रोटी खाकर मठ्ठा पिया। "माई, मुझे जाना है, बिना तकलीफ़ के गुज़ारा हो रहा है न!" उसने उस स्त्री से पूछा।

"मुझे अधिक क्या चाहिये! सब ठीक तरह चल ही रहा है!" उस गरीब स्त्री ने कहा।

"जो देते हैं, उनको भगवान देते हैं, जो काम सवेरे शुरू करो उसे शाम तक करते रहो। फिर देखना!" यह कहकर भिखारी अपने रास्ते चला गया।

गीता देवी

वह यह न समझ सकी कि उसने यों क्यों कहा था ! वह उसकी बात तभी भूल गई थी।

अगले दिन उसने बिस्तरे पर से उठते ही यह जानना चाहा कि उसके पास कितना कपड़ा बाकी रहगया था। कपड़ा वही था जो उसने अपने काते हुए सूत से बुनवाया था। उसे बेचकर वह जरूरी खर्च के लिए पैसा कमा लेती थी। यही उसकी रोजी थी।

उसने सन्दूक में से कपड़ा निकाला। वह हाथ से मापने लगी—"एक, दो" वह मापती गई और कपड़ा भी आता गया। "जो काम सबेरे शुरु करो, उसे शाम तक करते जाओ।" भिखारी की कही हुयी बात तब उसको यकायक समझ में आई।

उस दिन शाम होने से पहिले उसने हजारों गज कपड़ा लपेट कर रख दिया। कपड़ा सारे घर में बहुत ऊपर तक भर गया।

गाँव में तो कोई बात छुपती ही नहीं। अगले दिन सवेरे गाँव वाले उसके घर आकर मक्खियों की तरह भिन भिनाने लगे। हर कोई चार पाँच गज कपड़ा खरीद कर ले गया। गाँव में सबको बेचने के बाद भी गरीब स्त्री के घर में इतना कपड़ा बच गया कि वह उसकी सारी जिन्दगी के लिए काफ़ी था।

गाँव में यह बात भी फैल गई कि कैसे भिखारी ने आशीर्वाद दिया था। यह सुनते ही पड़ोस की स्त्री ईर्ष्या से जलने लगी। सुन्दर मौका खोने के कारण उसे इतना दुख हुआ कि वह पागल-सी हो गई।

तीन दिन बीत जाने के बाद किसी ने उस पैसेवाली स्त्री का घर खट खटाया।

उसने जब किवाड़ खोला तो उसके सामने वही भिखारी था।

"अरे भाई आ गये! आओ अन्दर आओ। उस दिन तेरी आवभगत न कर सकी। एक दो काम हो तो कोई बात भी है, मुझे ही सारे काम करने पड़ते हैं। उस दिन मैं इस कदर ऊबी हुयी थी कि कुछ न पूछो। गाय खूंटी से खुल गई और सारे पौधे पत्ते हजम कर गई। और मैं तेरा ख्याल न कर सकी।" धनी स्त्री उससे बड़े प्रेम से बातें करने लगी।

वह प्रेम इसलिए दिखा रही थी ताकि वह उसे भी वही वर दे, जो गरीब स्त्री को दिया था।

भिखारी को अन्दर ले आकर उसने कई शाक-सब्जियों के साथ उसे भोजन परोसा। खीर भी दी। उसके भोजन करने के बाद उसने कहा—"इस रात में कहाँ जाओगे। पलँग है, उस पर गद्दा डाले देती हूँ उस पर सो जाओ। जरूरत हो तो एक शाल भी है।"

परन्तु भिखारी ने कहा "जाना है।" उसने जाते हुए कहा—"जो काम सवेरे शुरु करोगी, वह शाम तक खतम न कर सकोगी।" यह आशीर्वाद देकर वह अपने रास्ते पर चला गया।

धनी स्त्री के सन्तोष की सीमा न थी। उस दिन रात को वह न सोई। सवेरे होते ही क्या करने से अधिक से अधिक लाभ होगा, यह ही सोचती रही। कुछ निर्णय न कर सकी। मक्खन निकाला तो मनों मक्खन निकलेगा। पर दिन भर मक्खन ही निकालती रही तो हाथ दुखने लगेंगे। इसलिए उसमें कोई फ़ायदा नहीं। फिजूल की मेहनत।

आखिर उसे एक अच्छी सूझ सूझी। उसके सन्दूक में चार मुहरें थीं। उनको

निकालना शुरु कर दूँगी, शाम तक लाखों, करोड़ों मुहरें जमा हो जायेंगी। उसके बाद उसके समान धनी इस संसार में कोई न होगा।

इस सूझ में वह ऐसी उलझी कि वह ऊँघी भी नहीं! पूर्व की ओर एक टक लगाये देखती रही कि कब सवेरा होता है। आखिर मुर्गों ने बाँग दी। सवेरा हो गया।

अमीर स्त्री अपने पलँग पर से उठकर अपने सन्दूक के पास गई। उसने एक कदम आगे रखा था कि नहीं कि एक भिड़ ने आकर उसके गले पर काटा। अमीर स्त्री ने उसे मारा तो वह उड़ गया। वह गुस्से में उसे भगाने लगी। इतने में एक और भिड़ ने आकर डंक मारा।

भिखारी का आशीर्वाद सच निकला। उसे दिन भर भिड़ काटते रहे। और वह उन्हें भगाती रही। लाखों भिड़ जाने कहाँ से आये। उस अमीर स्त्री का घर भिड़ों से भर गया। वह पगला गई। वह अपने को भिड़ों से न बचा सकी।

शाम होते होते यह बात सारे गाँव में फैल गई। अमीर स्त्री का वर किस तरह पूरा हुआ था यह देखने के लिए गाँव के सब स्त्री पुरुष, बच्चे, बूढ़े आये।

अमीर स्त्री ने जिस तरह पिछली रात बिताई थी, उसी तरह यह दिन बिताया। उसे बड़ा कष्ट हुआ।

आखिर सूर्य छुपा। भिड़ जैसे आये थे वैसे चले गये। ग्रामवासी भी चले गये।

उस दिन के बाद अमीर स्त्री इतनी शर्मिंदा हुयी कि वह उस गाँव में न रह सकी। उस दिन रात को अपना सारा समान लेकर वह कहीं और चली गई।

मित्र-संप्राप्ति

"कहते रहे कथा तुम लेकिन
दे न सका उस पर मैं कान,
कहता हूँ मैं इसका कारण
प्रथम उसे ही लो तुम जान।

यह भिक्षा का पात्र टँगा जो
उसमें ही रखता मैं अन्न,
किंतु एक चूहा है पापी
जो कर देता उसे निरन्न।

नहीं अकेला वह आता है
आती उसकी पूरी फौज,
झँपी आँख लगी है लगती
करने लगते वे सब मौज।

तँग उन्हींसे आकर मैंने
ढूँढ़ निकाली है यह रीत,
फटे बाँस को पटक पटककर
करता रहता उनको भीत।"

कहा मित्र ने ताम्रचूड़ से—
"किस बिल में वे करते वास?

गड़ा खजाना होगा शायद
कहीं उसीके बिलकुल पास।

धन की उस गर्मी के कारण
है इन चूहों में यह जोश;
मिल जाए वह ठौर अगर तो
करूँ ठीक उनके मैं होश।

नहीं अकारण करते भाई
ये चूहे इतना उत्पात,
शाण्डिली के तिल जैसी ही
है जरूर इनमें कुछ बात।

किसी गाँव में एक ब्राह्मण
रहता था पत्नी के साथ,
धन की रेखा नहीं लिखी थी
विधि ने उन दोनों के हाथ।

एक बार संक्रांति पर्व के
आने पर वह ब्राह्मणराज,
बोला अपनी पत्नी से यह—
'पुण्यपर्व आया है आज।

श्री "भारतीभक्त"

दान हेतु अब तो जाता हूँ
किसी पास के ही मैं गाँव,
तुम भी खिला किसी ब्राह्मण को
पुण्य कमा लेना इस ठाँव।'

कहा ब्राह्मणी ने गुस्से से—
'नहीं तुझे आती है लाज,
घर में क्या है जिसे खिलाकर
मैं भी पुण्य कमाऊँ आज?

पकड़ा तुमने हाथ कि जिस दिन
हुआ उसी दिन विधि भी वाम,
जेवर या अच्छे भोजन का
नहीं जान पायी मैं नाम।'

ब्राह्मण बोला—"नहीं नहीं प्रिय,
कहो नहीं ऐसी तुम बात,
कर्मों के फल से ही आती
जीवन में दुःखों की रात।

बहुत बहुत धन पुण्य हेतु ही
लुटा यहाँ देते धनवान,
किंतु श्रेष्ठ वह निर्धन है जो
कर देता कौड़ी का दान।

लालच बुरी बला है जग में
होता है जिससे नुकसान,
लालच बहुत किया गीदड़ ने
और गँवायी अपनी जान।

पर्वत-सा था काला सूअर
जिसे भील ने मारा बाण,
मरते मरते सूअर ने भी
लिये भील के पल में प्राण।

उसी समय इक भूखा गीदड़
आ निकला सहसा उस ओर,
उन दोनों के शव को लखकर
नाच उठा उसका मन मोर।

वहीं पास में धनुष पड़ा था
लगी हुई जिसमें थी ताँत,
उस लोभी ने प्रथम उसी पर
अड़ा दिये झट अपने दाँत।

किंतु ताँत के कटते ही बस
उछला वक्र धनुष का छोर

निकल गया वह उसकी छाती
औ' मस्तक को तत्क्षण फोड़।'

यों ब्राह्मण के समझाने पर
गयी ब्राह्मणी भी तब मान,
ठान लिया उसने यह मन में
करना ही है कुछ तो दान।

छाँट-कूटकर थोड़े-तिल
दिये धूप में उसने छोड़,
गया उसे कुत्ता गंदा कर
आ निकला था जो उस ओर।

'हाय हाय' कर उठी ब्राह्मणी
फिर आया मन में कुछ ख्याल,
सारे तिल ले गयी पड़ोसी
के घर में वह तो तत्काल।

गृहपत्नी से बोली जाकर
छँटे हुए तिल ले लें आप,
बदले में बिन छँटे हुए ही
तिल दे दें मुझको अब आप।

वचन ब्राह्मणी के सुनकर वह
लेने को हो गई तैयार,
किंतु वहीं बेटा था उसका
जो था बहुत बहुत हुशियार।

यह कह उसने मना किया झट—
'माँ, इसमें है कोई राज,

बिना छँटे तिल को बदले क्यों
छँटे हुए देती है आज?'

यों कथा सुनाकर ताम्रचूड़ को
बोला वह सन्यासी मीत,
"तड़के ही उठकर देखेंगे
कैसे पाते चूहे जीत।"

उन दोनों की बातें सुनकर
हुआ बहुत ही मैं बेहाल
सोचा, इससे बचना ही है
बन जाए यह कहीं न काल।

इसीलिए मैं अन्य मार्ग से
चला सदल बल जब भयभीत,
एक कहीं से बिल्ला झपटा
लगा विधाता ही विपरीत।

[५]

[राजकुमारी बुदूर को देखकर अलादीन उससे प्रेम करने लगा था। उसकी तरफ से उसकी माँ राजा से मिलने गई। उसने उसे वे रत्न भेंट में दिये जो अलादीन गुफा से लाया था और कहा कि उसका लड़का राजकुमारी से विवाह करना चाहता था। रत्नों को देखकर राजा भौंचक्का रहगया। वह शादी के लिए मान गया। मन्त्री ने कहा कि शादी तीन महीने तक स्थगित कर दी जाय। दो महीने गुजर गये। एक दिन अलादीन की माँ बाजार गई। बाजार सजाया गया था। उसको मालूम हुआ कि उस दिन राजकुमारी का विवाह मन्त्री के लड़के के साथ हो रहा था।]

उसने घर आते ही अलादीन से कहा—"बेटा! अशुभ वार्ता लायी हूँ।

"क्या खबर है माँ!" अलादीन ने उत्कंठापूर्वक पूछा।

"क्या कहूँ बेटा! राजा ने तुझे जो वचन दिया था, वह न निभाया। वे अपनी लड़की की शादी मन्त्री के लड़के के साथ कर रहे हैं। आज रात ही मुहूर्त है। मैं तो बहुत दिनों से सोचती आई थी कि मन्त्री जरूर कोई साजिश कर रहा होगा।" माँ ने कहा।

"तुझे इस शादी के बारे में मालूम कैसे हुआ?" अलादीन ने पूछा।

उसने नगर में जो कुछ देखा था, सुना था उससे कह दिया। वह सुन अलादीन एक क्षण तो हक्का बक्का रह गया परन्तु तुरन्त उसे अद्भुत दीप की याद आई।

"क्यों फ़िक्र करती हो माँ! आज यह शादी नहीं होगी। तुम उठो, रसोई करो। खाना खाकर मैं इस शादी को भंग करने की कोशिश करूँगा!" अलादीन ने माँ से कहा।

भोजन करके वह अपने कमरे में चला गया और अन्दर से किवाड़ बन्द कर लिये। दीप को लेकर उसने उसे रगड़ा। तुरत भूत प्रत्यक्ष हुआ। "क्या आज्ञा है!" उसने पूछा।

"सुन! राजा ने अपनी लड़की की शादी मुझ से करने का वचन दिया था। उसने तीन महीने की अवधि माँगी। अभी वह खतम न हुयी थी कि वह लड़की की शादी आज रात को मन्त्री के लड़के से कर रहा है। इसलिए तुम दुल्हा और दुल्हिन को लाकर मेरे सामने पेश करो।" अलादीन ने भूत को आज्ञा दी।

थोड़ी देर में भूत ने दुल्हे और दुल्हिन को अलादीन के सामने लाकर रखा। "और क्या आज्ञा है!" उसने पूछा।

अलादीन ने मन्त्री के लड़के को दिखाते हुए कहा—"इस अभागे को ले जाकर कूड़े कर्कट के ढेर पर सुलाओ। कल सवेरे फिर मुझे दिखाई देना।"

भूत और मन्त्री का लड़का जब चले गये तो अलादीन ने राजकुमारी की ओर मुड़कर कहा—मैंने तुम्हें धोखा देने के लिए यहाँ नहीं बुलाया है। तुम्हारे पिता ने ही मुझे धोखा दिया है। उन्होंने वचन दिया था कि वे तुम्हारी शादी मुझ से करेंगे, इसके

लिए तीन महीने की अवधि भी माँगी, परन्तु उस अवधि के समाप्त होने से पहिले उन्होंने अपनी प्रतिज्ञा भँग की और तेरी शादी मन्त्री के लड़के से करने की सोच रहे हैं। इसलिये मुझे यह करना पड़ा।"

शादी के लिए जो सजी धजी राजमहल में एक अलँकृत कमरे में बैठी थी, वह राजकुमारी एक झोंपड़ी में आने के कारण घबरा गई। और अलादीन की बातों ने तो उसे और भी घबरा दिया। उस भय के कारण उसने रात भर आँखें बन्द न कीं। अलादीन ने उसको अपने बिस्तर पर लिटाया। और अपने और राजकुमारी के बीच एक तलवार रखकर वह सो गया।

सवेरे दीप का भूत बिना किसी के बुलाये वहाँ आ गया। अलादीन ने उसे आज्ञा दी कि राजकुमारी और मन्त्री के लड़के को फिर राजमहल ले जाये।

अगले क्षण राजकुमारी और मन्त्री का लड़का राजमहल में थे। वे इतना भी न जान सके कि उनको वहाँ कौन लाया था।

राजा ने अपनी लड़की को बुलाकर पूछा—"क्यों बेटी! तुम्हें पति पसन्द है न!" राजकुमारी हैरान हो कर पिता

की ओर देखती रही, पर उसने कोई जवाब न दिया। राजा ने यह प्रश्न दो तीन बार पूछा पर उसने कोई उत्तर न दिया।

राजा गुस्से में रानी के पास गया। उसने पूछा—"मैंने बेटी से पूछा कि उसको पति पसन्द हैं कि नहीं। उसने कोई जवाब न दिया। क्या बात है!"

"आपसे कहते शर्मा रही होगी। ठहरिये, मैं उससे पूछ कर आती हूँ।" रानी ने कहा।

राजकुमारी ने रानी के प्रश्नों का भी पहिले उत्तर न दिया।

रानी ने घबरा कर पूछा—"क्यों, क्या बात है बेटी! क्यों नहीं जवाब देती हो!"

यह सुन राजकुमारी ने कहा—"क्या बताऊँ माँ! मैंने पति के कमरे में पैर रखा ही था कि कोई हमें उठाकर एक घर में ले गया। वह कौन था, यह जानने के लिए भी समय न था। फिर मुझे अकेला छोड़कर मेरे पति को कहीं ले गये। मेरी बगल में कोई नौजवान लेटा हुआ था। हम दोनों के बीच एक तलवार थी। मैं डर के मारे मर-सी गई। सवेरे होते ही हम दोनों यहाँ थे।

इसलिए जब पिता जी ने पूछा तो मैं कोई जवाब न दे सकी।"

"कोई बात नहीं, अगर तूने यह किसी से कहा तो लोग समझेंगे कि तेरी अक़्ल मारी गई है। अच्छा ही हुआ कि तूने अपने पिता से कुछ नहीं कहा। उनसे कुछ न कहना।" रानी ने कहा।

"माँ, मेरी अक़्ल नहीं मारी गई है। जो कुछ मैंने कहा है, वह सच है। अगर तुम्हें मेरी बातों पर विश्वास नहीं है तो मेरे पति से ही पूछकर देखो।" राजकुमारी ने कहा।

"बेटी। तुझे कुछ वहम-सा हो गया है। वह सब भूल जाओ। तेरे विवाह के अवसर पर कैसे खुशियाँ मनाई जा रही हैं! तैयार हो, आ, देखें।" कहते हुए रानी ने दासियों को बुलाकर राजकुमारी को सजाने के लिए कहा।

इस बीच रानी ने राजा के पास जाकर कहा—"लगता है बेटी ने रात को नींद में बुरे सपने देखे हैं। और कुछ नहीं।"

फिर उसने बिना किसी को कुछ बताये, मन्त्री के लड़के को बुलवाया। और राजकुमारी ने जो कुछ कहा था वह सब सुनाकर पूछा—"क्या ऐसा हुआ था?"

अगर वह यह कहता कि यह सच है तो सब उसकी हँसी उड़ाते। इसलिये उसने कहा कि वह झूट था। रानी ने निश्चय कर लिया कि हो न हो उसकी लड़की ने बुरे सपने देखे थे। दिन भर कोई न कोई मनोरंजन कार्य-क्रम चलता रहा। पर राजकुमारी ने उसमें कोई उत्साह न दिखाया।

उस दिन अलादीन शहर में घूमता रहा और मनोरंजन के कार्यक्रम को देखता रहा। "मन्त्री के लड़के का भाग्य है, वह

राजा का दामाद बन गया है।" जब सब कह रहे थे तो वह अपनी हँसी न रोक सका।

दूसरी रात भी, भूत द्वारा अलादीन ने राजकुमारी को अपने घर बुल्वाया और बीच में तल्वार रखकर दोनों एक ही पलंग पर सोये। भूत ने मन्त्री के लड़के को कूड़े कर्कट के ढेर पर सुलाया। सवेरे होते ही उन्हें राजमहल पहुँचा दिया।

राजा ने अपनी लड़की के पास जाकर पूछा—"बेटी! क्या हालचाल है!" किन्तु राजकुमारी ने कोई उत्तर न दिया, राजा को गुस्सा आगया। "जो पूछता हूँ उसका जवाब क्यों नहीं देती! देख, मैं क्या करता हूँ!" राजा ने अपनी तल्वार निकाली।

राजकुमारी डर गई। उसने आँसू बहाते हुए कहा—"पिता जी! अगर आपको सच मालूम होगया तो आप मुझपर तलवार नहीं निकालेंगे, तरस खायेंगे।" उसने जो कुछ गुजरा था, कह सुनाया—"यह सब दुल्हा भी जानते हैं। अगर मेरी बात पर यकीन न हो तो उनसे पूछकर देखिये।"

राजा को अपनी लड़की पर दया आई। "पगली! अगर तुमने यह कल कहा होता तो मैं पहरेदार रखवा देता और तुम्हारा कोई कुछ न बिगाड़ता। आज रात को तेरा कोई कुछ न कर सकेगा। मैं सब प्रबन्ध करवा दूँगा।"

फिर राजा ने मन्त्री को बुलाकर पूछा—"यह सब क्या है! क्या तुम्हारे लड़के ने तुमसे नहीं कहा कि दो दिनों से रात में क्या हो रहा है?"

"महाराज! मैं दो दिनों से, अपने लड़के से मिल ही न सका। मुझे कुछ नहीं मालूम है।" मन्त्री ने कहा।

राजा ने ये सब बातें मन्त्री को भी बताईं, जो उसकी लड़की ने उसे सुनाई थीं—"आखिर हुआ क्या है, यह तुम अपने लड़के से मालूम करो।"

मन्त्री ने अपने लड़के को बुलवाया। राजकुमारी का बताया हुआ वृत्तान्त सुना कर पूछा—"क्या यह सच है?"

"राजकुमारी भला झूठ क्यों कहे? मेरी हालत तो और भी बुरी है। मैं दो रात कूड़े कर्कट के ढ़ेर पर सोया। ठंड के मारे हड्डियाँ भी जम गईं। मैं यह शादी नहीं चाहता। मेरी यह शादी रद्द करवा दो, पिता जी! भले ही मैं राजा का दामाद न बनूँ, मैं एक और रात कूड़े कर्कट के ढ़ेर पर नहीं सो सकता!" मन्त्री के लड़के ने कहा।

यह सुन मन्त्री को बहुत दुख हुआ। इस विवाह के लिए उसने जी तोड़ प्रयत्न किया था। इसलिए उसने अपने लड़के से कहा—"बेटा! तुम जल्दबाजी न करो। आज रात देखें क्या होता है? इस तरह का भाग्य फिर नहीं मिलेगा।"

मन्त्री ने उसके बाद राजा के पास जाकर कहा—"महाप्रभु! राजकुमारी ने जो कुछ कहा है, वह बिल्कुल ठीक है। मेरे लड़के ने भी यही कहा है।"

"यह बात है तो मैं अभी यहीं शादी रद्द करता हूँ।" राजा ने आज्ञा दी कि शादी की खुशियाँ न हों।

जनता को जब मालूम हुआ कि विवाह रद्द हो गया है तो उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने मन्त्री और उसके लड़के को राजमहल से गुस्से में जाता देख पूछना शुरू किया—"क्या बात है? क्या हो गया है? पर बात क्या थी सिवाय अलादीन के कोई न जानता था।

(अभी और है)

कछुअे का गर्व

एक दिन जंगल में भोज लगा। उस दिन सब जन्तु आपस की शत्रुता भूल, एक जगह इकट्ठे हुये।

एक तरफ़ बड़ी बड़ी भट्टियों पर बड़े बड़े बर्तनों में कुछ पक रहा था। कुछ लकड़ियाँ ला रहे थे। कुछ शाक-सब्जियाँ काट रहे थे। कुछ एक जगह इकट्ठा हो गप्पें लगा रहे थे।

बातों बातों में खरगोश ने कहा—भागने में मेरी कोई बराबरी नहीं कर सकता—तेजी में सब कोई मेरे बाद ही हैं।"

"अक़्लमन्दी में मेरे बाद ही किसी और का नम्बर आता है।" लोमड़ी ने कहा।

"बहादुरी में मेरी बराबरी करनेवाला कोई नहीं है।" भेड़िये ने कहा!

भालू ने खँखार कर, गला साफ़ करके कहा—"परन्तु बल और पकड़ में मुझे कोई नहीं हरा सकता।"

कछुअे ने कुछ न कहा। वह मुस्कराता रहा।

यह देख भालू ने सोचा कि कछुआ उसे देखकर ही हँस रहा था।—"अरे मैं अपने बल की बात कह रहा हूँ और तुझे मखौल सूझी है!" भालू ने कहा।

कछुअे ने और जोर से हँसकर कहा—हँसू नहीं तो और क्या करूँ? मुझसे बाजी लगाकर जब खरगोश अपनी डींग मार सकता है तो मेरा बल जानते हुये यदि तू शेखी मारता है तो इसमें क्या खराबी है!"

भालू ने आश्चर्य से आखें फाड़कर कहा—"तो तू क्या यह कहता है कि तुझ में मुझ से अधिक बल है!

श्री सुमन कुमार जोशी

"जल में मुझ में जितना बल होता है, उतना यम में भी नहीं होता। तू अकेला तो क्या, सब मिलकर भी मुझे नहीं हरा सकते।" कछुवे ने कहा।

"मैं यह अपमान नहीं सह सकता।" भालू ने गुस्से में कहा।

"अभी रसोई नहीं हुई है, आओ हम इस बीच एक बार पँजा मिलालें।" कछुवे ने कहा।

"एक रस्सी लाकर मेरे पैर में बाँधो, और उसका दूसरा सिरा भालू को दो। मैं पानी में जाकर रस्सी हिलाऊँगा तब भालू मुझे बाहर खींचने का प्रयत्न करेगा। अगर भालू मुझे निकाल सका तो वह जीतेगा, नहीं तो मैं" उसने कहा।

एक रस्सी लाकर उसके एक सिरे को कछुवे के पैर में बाँध दिया गया। कछुवे ने दलदल में घुसकर रस्सी को एक वट के पेड़ की जड़ से बाँध दिया। फिर उसने रस्सी को हिलाया।

बाहर खड़े भालू ने एक हाथ से रस्सी खींची। रस्सी हिली नहीं। भालू ने दोनों हाथों से खींचा। तब भी कुछ न हुआ। रस्सी को पीठ पर रखकर खींचा, तब भी कोई फायदा न हुआ। भालू के हाथों में छाले पड़ गये। कन्धे पर चोट लग गई। पर कछुआ बाहर न आया।

आखिर भालू बेहोश सा नीचे गिर गया। रस्सी को न हिलता देख कछुवे ने रस्सी को अपने पैर में बाँध लिया। फिर दल दल में से आते हुये उसने कहा—"मैं भी जाने क्या समझे बैठा था, तेरा बल भी कोई मामूली नहीं है। तूने इसतरह खींचा कि मैं बाहर आते आते बचा।"

यह सुन भालू का शोक जाता रहा। सब मिलकर भोजन करने गये।

[७]

[रूपधर पितृ लोक गया। वहाँ उसने मृत ग्रीक वीरों को देखा। साँकेतिक से उसने भविष्य में आने वाले कष्टों के बारे में जाना। रूपधर अपने देश की ओर निकला। मार्ग में नाग कन्याओं से बचकर, वह सूर्य भगवान के द्वीप में पहुँचा। जब उसके सैनिकों ने शपथ की कि वे पशुओं को न छुयेंगे, रूपधर ने उनको उस द्वीप में उतरने की अनुमति दी। उसके बाद :]

ग्रीक अपनी नौका को एक ऐसी जगह ले गये, जो बन्दरगाह-सा जान पड़ता था। वहाँ उन्होंने अपनी नौका बाँध दी। पास ही पीने के पानी का सोता भी था। वे तट पर गये। वहाँ उन्होंने भोजन बनाकर खाया। फिर वे उन साथियों के बारे में, जिन्हें विश्वेसनी ने निगल लिया था, सोचते सो गये।

उस दिन रात को तीसरे पहर तूफ़ान शुरु हुआ। आसमान में घने घने बादल छा गये। दक्षिण दिशा से तेजी से हवा बहने लगी। ग्रीकों ने अपनी नौका बाहर निकालकर एक गुफ़ा में रख दी। रूपधर ने अपने सैनिकों से कहा—"मित्रो! हमारी नौका में हमारे लिए कितनी ही खाने की चीज़ें आदि,
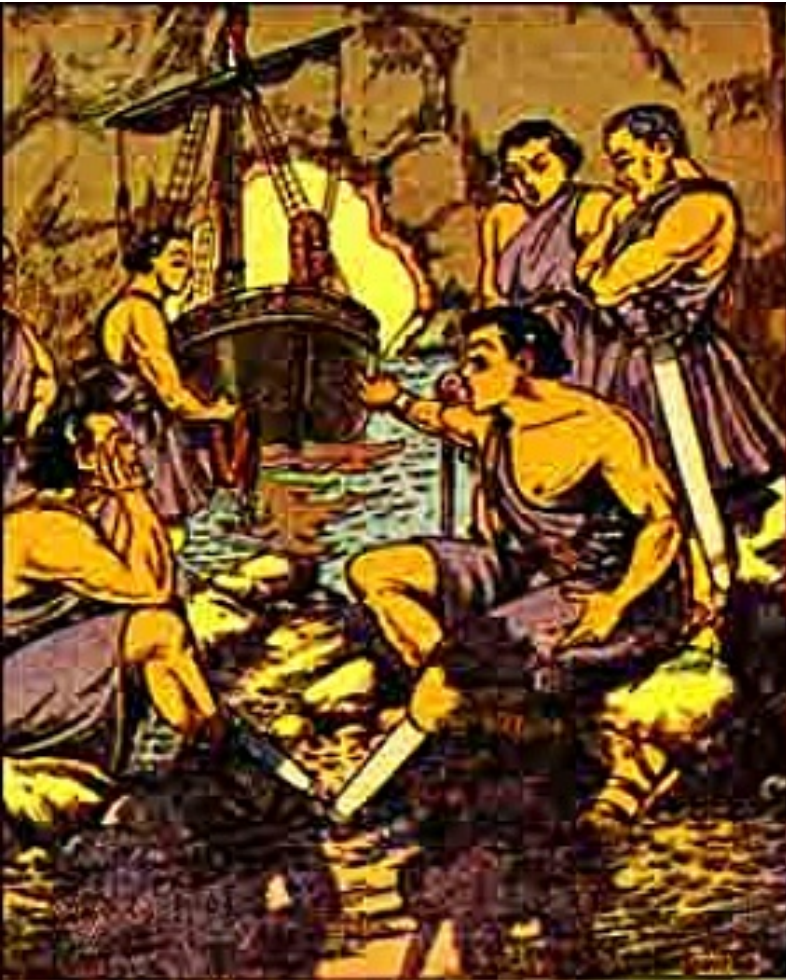
ठीक तरह न भर रहा था। कपड़े भी चीथड़े हो गये थे।

यह देख, रूपधर ने देवताओं से प्रार्थना करने की ठानी। वह अपने सैनिकों को छोड़कर, द्वीप के अन्दर ऐसी जगह गया, जहाँ तूफ़ान का शोर सुनाई न पड़ता था, उस शान्त प्रदेश में देवताओं की प्रार्थना करता करता वह सो गया।

इस बीच, मायावी ने गुफ़ा में बाकी सैनिकों से कहा—"मित्रो! तुम बहुत निस्सहाय स्थिति में हो। इसलिए मैं एक बात बताता हूँ, सुनो। हर प्राणी हर प्रकार की मृत्यु से डरता है। पर भूख से मरना सबसे खराब है। इसलिए तुम बिल्कुल न हिचको। आओ, जाकर पशुओं को पकड़ लायें। अगर हम कभी इथाका पहुँचे तो वहाँ सूर्य भगवान के लिये एक मन्दिर बनवादेंगे। फ़िलहाल हम इन पशुओं को लायें, यथाविधि स्वर्ग के देवताओं को बलि दें, फिर उन्हें खाकर अपनी प्राण रक्षा करें। अगर तब भी सूर्य भगवान नाराज रहे और देवताओं को हमारी मदद करने से रोका तो हम अभी समुद्र में डूब जायेंगे। हिसाब खतम होगा।

हैं इसलिए हमें इस द्वीप के पशुओं के बारे में नहीं सोचना चाहिए। वे सूर्य भगवान के हैं। अगर हमने उनको छुआ तो हम जिन्दे न रहेंगे। मैं तुमको सावधान कर रहा हूँ।"

सैनिक भी यूँ ही मरना न चाहते थे। इसलिए उन्होंने अपने सरदार की आज्ञा का पालन किया। महीने भर तक तूफ़ान चलता रहा। नौका में रखी खाद्य-सामग्री खतम हो गई। ग्रीक सैनिकों को भोजन के लिए पक्षियों का शिकार करना पड़ा। मछलियाँ पकड़नी पड़ीं। किसी का पेट

इस निर्जन द्वीप में, भूख से घुट घुटकर मरने से तो उस खारे पानी को पीकर मरना ही अच्छा है।"

मायावी की बातें सुनकर बाकी सैनिक बड़े खुश हुए। वे झट निकले और द्वीप में चरते अच्छे अच्छे पशुओं को चुनकर पकड़ लाये, उनको शास्त्रोक्त रीति से बलि चढ़ाया, फिर उन्होंने उन्हें पकाना शुरु कर दिया।

इतने में रूपधर जागा और अपने सैनिकों से मिलने के लिए निकल पड़ा। वह तट से कुछ दूरी पर ही था कि उसको माँस के पकने की गन्ध आई। वह जान गया कि उसके सैनिक सूर्य भगवान पर अत्याचार कर रहे थे। उसने उन्हें डांटा-डपटा। पर जो होना था, सो हो चुका था। प्रायश्चित्त करने का भी कोई फायदा न था।

उन्होंने उन पशुओं का माँस छः दिन तक खाया। सातवें दिन तूफ़ान बन्द हो गया। रूपधर और उसके सैनिक अपनी नौका समुद्र में खींचकर ले गये और तुरत यात्रा करने लगे। कुछ देर बाद सूर्य भगवान का द्वीप आँखों से ओझल

हो गया। जिस तरफ़ देखो, उस तरफ़ समुद्र और आकाश के अतिरिक्त कुछ न दिखाई देता था।

उस समय आकाश में एक बड़ा काला मेघ दिखाई दिया। पश्चिम की ओर से विनाशकारी प्रलयंकर वायु बहने लगी। उसकी चोट से जहाज का मस्तूल उसके पकड़नेवाले के सिर पर गिर पड़ा। वह मर कर समुद्र में गिर गया। उसी समय जहाज़ पर बिजली गिरी। नौका चकनाचूर हो गई। रूपधर के सब सैनिक समुद्र में जा गिरे। किसी का कुछ पता न था।

परन्तु रूपधर को एक शहतीर मिल गया। उसने उस पर, एक खम्भे के सहारे पाल लगा दिया। वह उस पर तैरने लगा। इतने में पश्चिमी हवा बन्द हो गई और दक्षिणी हवा बहने लगी। रूपधर ने सोचा, या तो वह फिर भँवर में फँसेगा नहीं तो विध्वंसिनी राक्षसी का भोजन बनेगा। उसे बड़ा डर लगा। जैसे उसे भय था, सवेरा होते होते उसकी वह तमेड़ उसी जगह आ गई थी, जहाँ भँवर थी। परन्तु सौभाग्यवश वह दोनों खतरों मे बच गया।

रूपधर नौ दिन इस तरह ही बहता रहा। दसवें दिन रात को वह अगजिये नाम के द्वीप पर आकर लगा। उस द्वीप में सम्मोहिनी नाम की एक देवी एक गुफ़ा में रहा करती थी। उस गुफ़ा के आस-पास का स्थल बहुत सुन्दर था। गुफ़ा के चारों ओर जंगली पेड़ थे उनको घेरे हरे मैदान थे, नाले थे। गुफ़ा के द्वार पर अंगूर की बेलें लटक रही थीं। उन पर अंगूरों के गुच्छे लगे हुए थे। सुन्दर दृश्य था।

रूपधर, जब उस द्वीप के किनारे लड़खड़ा रहा था तो सम्मोहिनी ने उसके पास जाकर उसका स्वागत किया और उसको साथ अपनी गुफ़ा में ले गई। उसको खाने के लिए अच्छी चीज़ें और पीने के लिए अच्छी शराब दी। खूब आवभगत की। "अगर तुम मेरे पति होकर रहे तो न तुम बूढ़े होगे, न मरोगे ही।" उसने वचन दिया।

उस द्वीप में, उसके वचन का धिक्कार कर, रूपधर कुछ कर भी न सकता था। उसकी इच्छा के अनुसार उसने उससे विवाह किया और उसके साथ उस द्वीप में पाँच साल तक वैवाहिक जीवन बिताया।

पर जैसे जैसे दिन बीतते जाते थे, वैसे वैसे उसकी स्वदेश जाने की इच्छा बढ़ती जाती थी, कम न होती थी। वह दिन भर, खोया खोया-सा समुद्र के किनारे बैठा रहता।

सम्मोहिनी भी ताड़ गई कि वह उसको अपने देश के बारे में सोचने से नहीं रोक सकती थी, उसने उससे एक दिन कहा—"तुझे देखकर दया आ रही है। मैंने तुझे भेजने का निश्चय कर लिया है। दुखी मत हो। उठकर पेड़ काटकर तमेड़ बना ले। तुझे जितनी खाने-पीने की चीज़ें चाहिये वे सब मैं दूँगी। कपड़े दूँगी और अनुकूल हवा भी दूँगी। उनकी सहायता से तुम चले जाओ।"

यह सुनते ही रूपधर पुलकित हो उठा। "इसमें कोई न कोई बात है। नहीं तो तुम इस महासमुद्र को तमेड़ पर बैठ कर पार करने के लिए सलाह न देती। अच्छी नौकायें भी चकनाचूर हो गई हैं। इसलिये जबतक मुझे विश्वास नहीं हो जाता कि तुम अपनी इच्छा से भेज रही हो, मैं यह द्वीप छोड़कर न जाऊँगा। यह मेरा पक्का इरादा है।"

"तुम्हारी बुद्धि वक्र बुद्धि है। इसलिये तुम्हें सन्देह हो रहा है। चाहते हो तो प्रमाण करती हूँ। मैं तुम्हारी मदद करना चाहती हूँ। क्या मेरा दिल पत्थर का है? तुझे देखकर मुझे बड़ा तरस आ रहा है।" सम्मोहिनी ने कहा।

वह उसको अपने गुफा में ले गई। उसको समस्त प्रकार के व्यंजन परोसकर भोजन कराया। फिर उसने उससे कहा—"तेरा घर जाना तो अच्छा है पर जब तुम जान जाओगे कि मार्ग में कितनी कठिनाइयाँ हैं तो तुम मुझे छोड़कर न जाओगे। तुम

बादल छा गये। भयंकर वायु चलने लगी। अन्धेरा हो गया। रूपधर ने सोचा कि मौत पास ही थी।

"मैं कितना अभागा हूँ। जो ट्रॉय नगर में मर गये थे वे मुझ से कितने ही अधिक भाग्यवान हैं। उनकी अन्त्येष्टि क्रिया की गई थी। इस समुद्र में यों मरने से तो यही अच्छा होता कि मैं भी वज्रकाय के साथ मर गया होता।"

पर देवताओं ने उसे तँग करने की ठान रखी थी। हवा की थपेड़ से पतवार उसके हाथ से इस प्रकार निकली, जैसे किसी ने खींच ली हो। रूपधर उस तमेड़ से नीचे गिर गया। क्यों कि उसके कपड़े भीगकर भारी हो गये थे, इसलिये वह जल्दी ऊपर न आ सका। जैसे तैसे उन कपड़ों को छोड़कर, तमेड़ पकड़ कर ऊपर चढ़कर बैठ गया। तमेड़ चक्कर काटने लगी, गेंद की तरह समुद्र में उछलने लगी। उस समय, रक्षकी नाम की एक अप्सरा, पक्षी रूप में, चोंच में एक कपड़ा लेकर—तमेड़ के पास आकर मँडराई। "रूपधर! तुम मर नहीं सकते। देवता चाहे तुम्हें बहुत तँग करें, पर वे तुम्हें मार नहीं सकते। तुम घर पहुँच जाओगे। परन्तु यह तमेड़ तेरे लिए निरुपयोगी है। इसलिये इस कपड़े को छाती पर लपेटकर पानी में कूदो। इसतरह करने से तुम डूबोगे नहीं। समुद्र के किनारे पर पहुँच जाओगे।"

रूपधर ने उसकी बातों पर ध्यान न दिया। "मुझपर और मुसीबतें ढाने के लिए शायद यह एक चाल है। भले ही मस्तूल गिर जाय, पर मैं यह तमेड़ नहीं छोड़ूँगा।" सोचकर वह तमेड़ ज़ोर से पकड़कर बैठ गया।

परन्तु तुरत एक बड़ी लहर आई और उसने तमेड के टुकड़े टुकड़े कर दिये। उसे सिर्फ़ एक मोटी-सी लकड़ी मिली। वह उस पर इस तरह चढ़ बैठा जैसे घोड़े पर चढ़ा हो। और रक्षिता की दिये हुये कपड़े को छाती पर उसने लपेट लिया। वह पानी पर लेट गया और धीमे धीमे तैरने लगा।

वह उस कल्लोलित समुद्र में दो दिन तैरता रहा। तीसरे दिन तूफ़ान बन्द हो गया। दूरी पर उसे तट दिखाई दिया। यह सोच कर कि अब बुरे दिन लद गये हैं, वह उत्साहपूर्वक तीर की ओर देखने लगा। वह यह भी जान गया कि उस किनारे पर भी उसकी जान जोखिम में थी। उसे आराम न मिलेगा।

क्यों कि वह किनारा पथरीला था। समुद्र की तरंगें उससे टकरा कर झाग हो रही थीं। उनका शोर उसे सुनाई पड़ रहा था। अगर लहरों ने उसे उन पत्थरों पर दे मारा तो क्या होगा!

जैसा उसने सोचा था, वही हुआ। एक ऊंची लहर उसको उठाकर बहुत तेजी से पत्थरों की ओर ले गई। वह एक पत्थर पर जोर से टकराया। परन्तु जब वह लहर लौटी तो उसे वापिस समुद्र में ले गई। इस खींचातानी में उसके हाथों पर चोट लगी।

इस बार रूपधर ने तीर की ओर तैरना छोड़ दिया, वह उसके किनारे किनारे तैरने लगा। कुछ दूर तैरने के बाद उसे एक नदी का मुहाना दिखाई दिया। उसकी जान में जान आई। उसने नदी से प्रार्थना की कि वह उसकी रक्षा करे। वह किनारे पर आते ही बेहोश गिर गया।

(अभी और है)

कील की कीमत

एक गाँव में एक गरीब नौजवान रहा करता था। उसका नाम था गोविन्द। उसकी शादी हो चुकी थी। उसके दो बच्चे भी थे। क्योंकि उसके पास कोई जमीन-जायदाद न थी इसलिए उसको अपनी मेहनत से उन्हें पालना-पोसना पड़ता था। वह कस्बे तक पैदल जाता, वहाँ जाकर कुली मजदूरी करता और जो कुछ मिलता उससे ज़रूरी चीज़े खरीदकर लाता।

गोविन्द की बचत की आदत थी। छुटपन में उसका पिता सदा कहा करता—"बेटा कभी कभी छोटी चीज़ से भी ज़रूरी काम निकल जाता है।" गोविन्द यह बात न भूला था।

एक दिन जब सड़क से वह आ रहा था तो मन्त्री का लड़का घोड़े पर सवार होकर, बाण की तरह तेज़ चला आ रहा था—गोविन्द के देखते देखते घोड़े के पाँव की नाल की एक कील नीचे गिरी।

"बाबू नाल की एक कील गिर गई है।" गोविन्द जोर से चिल्लाया।

मन्त्री के लड़के ने पीछे मुड़कर देखा। और लापरवाही से हाथ हिलाते आगे बढ़ता गया। उसे पीछे मुड़कर नाल की कील लेना अपनी इज़्ज़त के खिलाफ़ लगा। यही नहीं, वह जंगल के रास्ते, पगडंडी से शहर जा रहा था—इसलिए उस कील का होना न होना बराबर था।

परन्तु इस विषय में मन्त्री का लड़का गल्ती कर रहा था। वह जंगल में अभी काफ़ी दूर न गया था कि नाल ढीली होकर गिर गई। अगर उसने गोविन्द से कील ले ली होती तो जैसे तैसे नाल लगाली होती। परन्तु जब नाल के

न होने पर घोड़ा लंगड़ाने लगा तो उसे उतर कर चलना पड़ा। उसे जंगल में अकेला जाता देख चोरों ने उस पर धावा किया, उसका सब कुछ लूट लाटकर उसे पेड़ से बाँध दिया।

इस बीच, गोविन्द कील को अपने पास सम्भालकर रख आगे चल दिया। उसको थोड़ी दूर चलने के बाद—एक गाड़ी खड़ी दिखाई दी। एक कील के निकल जाने के कारण पहिया निकल आया था। गाड़ी के पास एक रईस खड़ा था।

उसने गोविन्द को देखते ही पूछा—"क्यों भाई, तुम्हारे पास कोई कील है? मुझे जल्दी शहर जाना है। रास्ते में कहीं कील गिर गई है। और इस बियाबान जंगल में कहीं लोहे का टुकड़ा भी नहीं दिखाई देता।"

गोविन्द ने नाल की कील को पत्थर से पहिये में ठोक दी। पहिया लग गया। रईस को बड़ा सन्तोष हुआ।

"शायद तुम भी शहर जा रहे हो, आओ, गाड़ी में चलें।" रईस ने कहा। वह उसको अपने साथ शहर ले गया। उसके हाथ में उसने एक सोने का सिक्का भी रखा।

सिक्का देखते ही गोविन्द की आँखें बड़ी हो गईं। वह सिक्का उसके परिवार के भरण-पोषण के लिए दो महीने तक काफ़ी था। जो बात उसके पिता ने कभी कही थी अब वह सोलह आने सच निकली। एक नाले की कील ने उसे एक सोने का सिक्का दिलवा दिया था।

गोविन्द ने अपने कुटुम्ब के लिए महीने भर की खाने-पीने की चीज़ें खरीदीं और उन्हें बोरे में रखकर, जंगल के रास्ते पर

की ओर चल पड़ा। क्योंकि उस रास्ते उसका गाँव नज़दीक पड़ता था।

थोड़ी दूर जाने के बाद, रास्ते के पास के एक पेड़ के पीछे उसे कोई आर्तनाद सुनाई दिया।

गोविन्द अपना बोरा झाड़ियों के पीछे रखकर, पेड़ के पास गया। उसे वहाँ, छः बच्चे और एक स्त्री दिखाई दी। सबकी दयनीय हालत थी। वह स्त्री किसी करोड़पति की स्त्री थी। वे उसके बच्चे थे।

"परसों सवेरे, हम सब जंगल में घूमने आये। बच्चे फूलों के लिए जंगल में जा घुसे। कहीं वे इधर उधर न भटक जायें, यह सोच मैं भी उनके पीछे गई। इतने में अन्धेरा हो गया और हमें रास्ता न मालूम हुआ। खाया-पिया था नहीं इसलिए हम घूम फिर भी न सके। हम यहीं से चिल्लाने लगे। पर हमारा रोना सुननेवाला कोई न था। आप भगवान की तरह आये हो।" करोड़पति की पत्नी ने कहा।

"डरिये मत। मेरे साथ आइये, मैं रास्ता दिखाऊँगा।" गोविन्द ने कहा।

"हमारी हालत इस समय इतनी खराब है कि हम पैर उठाकर नहीं रख सकते हैं,

अब हमें चाहिये मुठ्ठी भर अन्न।" उस स्त्री ने कहा।

"तो ठहरिये, अभी मैं आता हूँ।" गोविन्द ने कहा। वह भागकर अपना बोरा ले आया। उसमें कुछ मिठाई वगैरह भी थी, जो वह अपने बच्चों के लिए ले जा रहा था। उसने उसे करोड़पति के बच्चों को दे दी। अपने पास की चीज़ों से वहीं खाना तैयार किया। थोड़ी देर में सबने भोजन किया। वह उनको अपने साथ रास्ते तक लाया। अब मुझे आज्ञा दीजिये।" उसने कहा।

"भाई, हम घर नहीं पहुँच सकेंगे। हमें घर पहुँचाकर जाओ।" करोड़पति की पत्नी ने कहा।

घर पहुँचने पर उसने गोविन्द के हाथ में एक थैली रखी।

गोविन्द ने जब उसको खोलकर देखा तो उसमें आठ सोने की मुहरें थीं। उनको देखकर उसकी आँखें और भी चौंधियायीं। उसे सपने में भी न मालूम था कि एक कील उसे इतना धन देगी। उसने कुछ और चीज़ें खरीदीं और उन्हें बोरे में डालकर, जंगल के रास्ते घर की ओर चला।

जब वह जंगल में पहुँचा तो उसे किसी आदमी की कराहट सुनाई पड़ी। वह उस दिशा की ओर गया, जहाँ से कराहट आ रही थी। उसने मन्त्री के लड़के को पहिचान लिया। वह पेड़ से बँधा था और सूखकर काँटा हो गया था।

मन्त्री के लड़के ने काँपती हुई आवाज़ में गोविन्द को अपनी आपत्ति के बारे में सुनाया। गोविन्द ने उसके बन्धन खोले। उसको चलाता वह अपने घर ले गया। उसे पेट-भर खाना खिलाया।

"बाबू, एक नाल की कील के कारण आपका नुक्सान हुआ है और उसके कारण मुझे फायदा हुआ है।" कहते हुए गोविन्द ने अपना किस्सा सुनाया।

सब सुन मन्त्री के लड़के ने कहा—"देख, गोविन्द मुझे ठीक तेरा जैसा आदमी चाहिये, जो मेरी देखभाल कर सके। तुम मेरे साथ शहर चले आओ। तेरे ठहरने के लिए बढ़िया घर और अच्छा वेतन दूँगा।"

उस दिन गोविन्द अपने परिवार के साथ शहर चला आया और मन्त्री के लड़के के यहाँ नौकरी करने लगा।

न्याय सब के लिए समान है

एक गाँव के चौधरी के पास एक पशु-पालक रहा करता था। उसके पास एक अपनी गौ थी। वह मालिक की गौवों के साथ अपनी गौ को भी चराने ले जाया करता था।

एक दिन पशु-पालक की गौ और मालिक की गौ में झगड़ा हुआ। दोनों खूब लड़े। पशु-पालक की गौ ने उसके मालिक की गौ को मार दिया।

पशु-पालक ने तुरन्त चौधरी के पास जाकर पूछा—"अगर आपकी गौ मेरी गौ से लड़कर उसे मार दे तो उसका क्या हरजाना होगा?"

चौधरी ने झट कहा—"उसका कोई हरजाना नहीं होगा। लड़ना, झगड़ना पशुओं का स्वभाव है। उस बारे में कौन क्या कर सकता है!"

"लगता है, आपने ठीक नहीं सुना है। मेरी गौ ने आपकी गौ को मार दिया है। मुझे डर था कि कहीं आप मुझ से हरजाना माँगेंगे। मैं बच गया।" पशु-पालक ने कहा।

लोभी
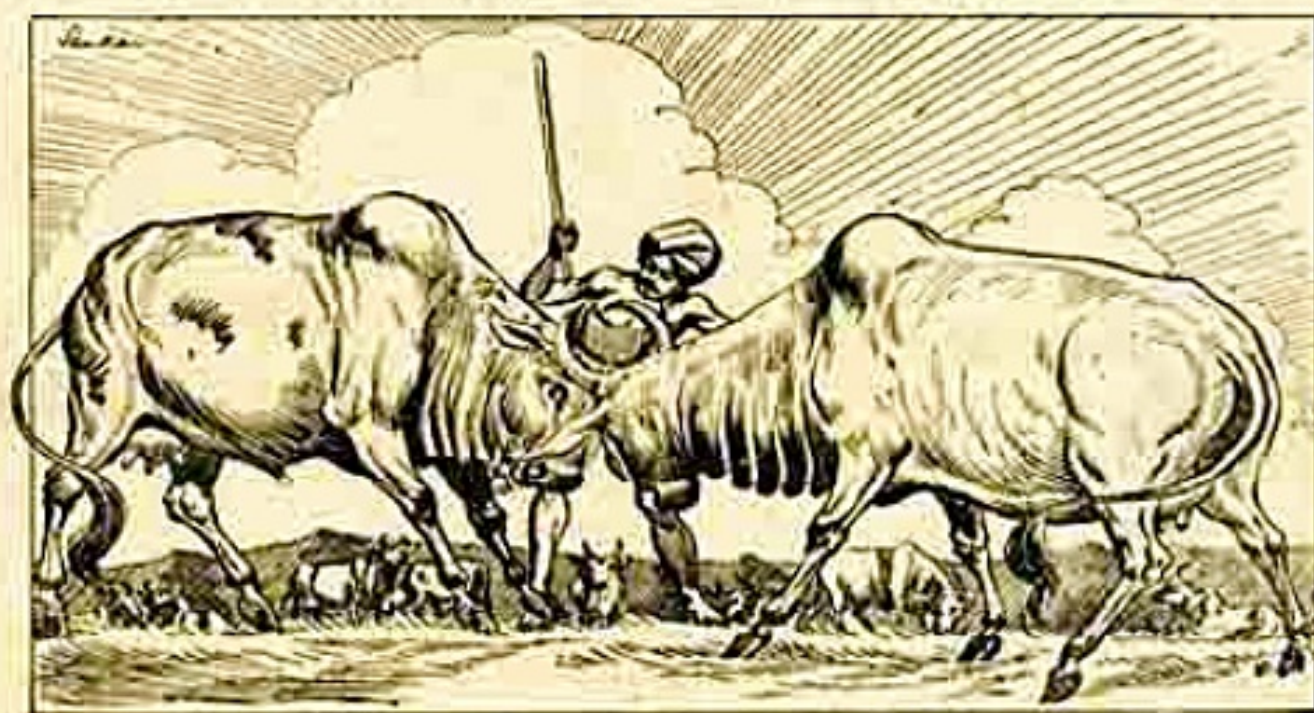
किसी देश में एक गरीब रहा करता था। वह आस-पास के गाँवों में भीख माँग कर गुजर किया करता था। खेतों में जब काम होता तो कूली मजदूर अपने खाने में से थोड़ा बचाकर उसे दिया करते। नहीं तो उसे कुछ न मिला करता। घर घर भीख माँगता तो कुत्ते काटने दौड़ते। कुछ खाने को न मिलता। वह कई दिनों तक भूखा तड़पता रहता।

एक साल उस भिखारी की यही हालत हुई। दो दिन उसने खाना न खाया था। वह एक ग्राम से दूसरे ग्राम के लिए निकला। रास्ते में उसे एक बूढ़ा मिला। "अरे भाई तुम्हारी पीठ पेट एक हो गई है। लो यह चने का दाना लो।" उसने उसे एक चना दिया।

"क्या इससे पेट भर सकेगा?" भिखारी ने पूछा।

"अगर इसे तुम खाओगे तो तुम्हें क्या मिलेगा! यदि यह तुम्हारे पास रहा तो तुम्हें हर कोई आतिथ्य देगा। तब तुझे खाने के लिए दर दर न भटकना पड़ेगा।" बूढ़े ने कहा।

बाद में दोनों अपने अपने रास्ते चले गये। अन्धेरा होने पर भिखारी एक गाँव में पहुँचा। उसने एक घर के सामने खड़े होकर कहा—"थोड़ा खाने को दीजिये।"

तुरत घर का मालिक बाहर आया। भिखारी को देखकर वह जान गया कि वह उसके गाँव का न था। उसे अन्दर ले जाकर पेट भर खाना खिलाया। "आज रात हमारे घर सो सकते हो। इस अन्धेरे में कहाँ जाओगे!" घर के मालिक ने भिखारी से कहा।

भिखारी बड़ा खुश हुआ। उसे कभी, किसी ने इतने आदर के साथ निमन्त्रित न किया था। उसने सोचा कि यह सब उस चने का ही प्रभाव था। उस चने को सिरहाने रखकर वह उस घर के आँगन में आराम से सो गया।

सवेरे सवेरे, घर के मालिक की मुर्गी, भिखारी की सोने की जगह आई। उसके किये हुये आवाज के कारण भिखारी उठ गया। परन्तु इतने में मुर्गी उस चने को पकड़कर निगल गई। "अरे! बाप रे बाप, मेरे चने का दाना मुर्गी निगल गई है।" भिखारी जोर जोर से रोने लगा।

घर का मालिक यह सुनकर आया। सारी बात मालूम कर लेने के बाद उसने कहा—"एक चने के दाने के लिए इतना रोते चिल्लाते हो। चाहते हो तो पाव भर चने दूँगा। लेकर चले जाओ।"

"मुझे पाव भर चने नहीं चाहिये। मुझे मेरा चना ही चाहिये। वह भाग्य का चना है। उसे मुझे एक सिद्ध पुरुष ने दिया है।" भिखारी ने कहा।

"पर वह दाना तो मुर्गी के पेट में है। इसलिये यह मुर्गी देता हूँ। ले जाओ।" घर के मालिक ने कहा।

यह सोच कर कि मुर्गी को बेचने से शहर में एक डेढ़ रुपया मिल जायेगा वह उसे लेकर उस ग्राम से निकल पड़ा। वह उस दिन शहर न पहुँच सका। इसलिये उसने एक आदमी के यहाँ आश्रय माँगा। उस आदमी ने देना स्वीकार कर लिया।

भिखारी ने उस दिन भी पेट पर भोजन किया। मुर्गी को बगल में रखकर सो गया। उसकी आँख लगी ही थी कि मुर्गी आँगन में भाग गई और उस घर की मुर्गियों से झगड़ने लगी। बाकी सब मुर्गियाँ एक होकर भिखारी की मुर्गी को भगाने लगी। वह उनसे बचकर एक बछड़े के पाँव के नीचे से भाग रही थी कि बछड़े ने उसे कुचल दिया और वह मर गई।

"बाप रे बाप, मेरी मुर्गी, मेरी सोने की मुर्गी।" भिखारी फिर जोर जोर से रोने लगा। मालिक ने कहा कि वह उसे दो मुर्गियाँ देगा पर भिखारी न माना। उसने बछड़ा देने के लिए कहा। वह आदमी मान गया, उसने उसे बछड़ा दे दिया। बछड़े को साथ लेकर वह शहर की ओर गया।

जब उसने शहर में पैर रखा तो शाम हो चुकी थी। इसलिये शहर के बाहर एक बड़ा घर देखकर वहाँ प्रवेश किया। उस घरवाले से कहा—"बाबू, मैं बहुत दूर से चला आ रहा हूँ। इस शहर में मेरा जानने पहिचानने वाला कोई नहीं है। क्या आज रात आप अपने घर रहने देंगे!" घरवाला मान गया।

उस दिन, उस घर में कोई विशेष बात थी। बहुत-से सम्बन्धी आये हुये थे। रात को बहुत बड़ा प्रीति भोज हुआ। भिखारी ने भी उनके साथ पेट भर खाना खाया। उस गड़बड़ी में हर कोई बछड़े को घास-फूस देना भूल गया। रात में बछड़े ने रस्सी खोल ली। घर के मालिक का घोड़ा जहाँ बंधता था, वह वहाँ चला गया, उसका दानी पानी खाने लगा। घोड़े ने बछड़े को दुलत्ती मारी। बछड़ा तड़प तड़प कर वहीं मर गया।

अगले दिन भिखारी घरवाले से लड़ने झगड़ने लगा। घरवाला सीधा-सादा था। घर में आये हुये बन्धुओं के सामने वह किसी पराये आदमी से झगड़ा मोल लेना न चाहता था। इसलिये उसने अपना घोड़ा भिखारी को दे दिया।

भिखारी घोड़े पर सवार होकर दूरवाले शहर की ओर निकल पड़ा। रास्ते में वह सोचने लगा "अब मेरा भाग्य बदल गया है। बूढ़े का दिया हुआ चना बहुत गजब का था। केवल घोड़े गधों के पाने से क्या फायदा! इस बार अच्छा घर, अच्छी स्त्री थोड़ी बहुत जमीन जायदाद भी पानी है। यह घूमना फिरना छोड़कर, एक जगह जम जाना है।"
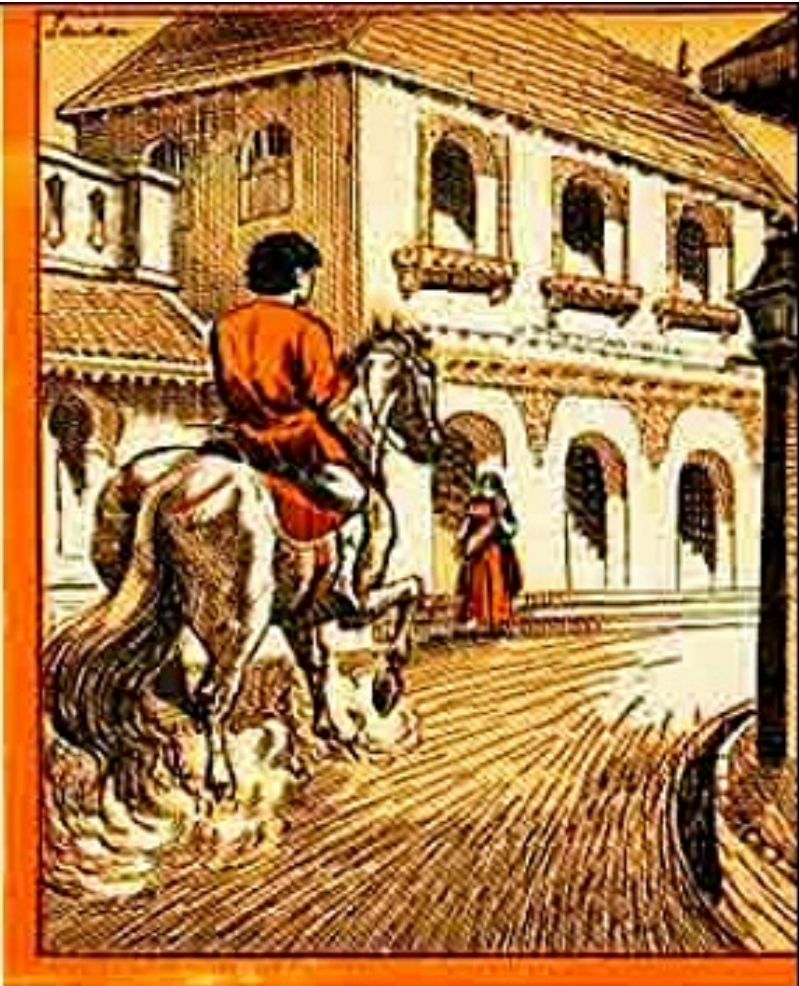
उस दिन शाम को वह शहर में पहुँचा। जब वह एक गली में जा रहा था तो उसे एक धर्मशाला दिखाई दी। उस धर्मशाला के दरवाजे के पास एक सुन्दर लड़की खड़ी थी। उसको देखते ही उसने सोचा यदि वह उसकी स्त्री हो सकी तो बहुत अच्छा होगा। इसलिये वह घोड़े से उतरा। धर्मशाला के मुंशी के पास जाकर उसने जगह माँगी। मुंशी ने भिखारी को एक कमरा दिखाया।

भिखारी ने जो लड़की देखी थी, वह उस मुंशी की पुत्री ही थी। सिवाय उसके मुंशी के और कोई सन्तान न थी। अगर उसने उससे विवाह कर लिया तो वह भी उस धर्मशाला में रह सकेगा। घर-बार, स्त्री बाल बच्चे, खाने-पीने की सुभीतायें, सब कुछ मिल जायेंगी।"

इसलिए भिखारी ने धर्मशाला के कमरे में प्रवेश करते हुए कहा—"बाबू, मेरे घोड़े को जरा देखभाल कर दाना-पानी देना। वह बहुत कीमत का घोड़ा है। मामूली घोड़ा नहीं है।"

"क्योंकि उस घोड़े के बारे में उसके मालिक ने इतना कहा था, इसलिए मुंशी स्वयं उसको नाँद के पास ले गया। उसको जबतक पानी पीना था उसने पिया, फिर जब मुंशी जरा ऊँघने लगा तो अन्धेरे में वह बाहर भाग गया। मुंशी ने भिखारी के पास आकर जो कुछ गुज़रा था, कह सुनाया।

भिखारी ने गरमाते हुए कहा—"मैंने पहिले ही कहा था न? इतनी लापरवाही! जानते हो इस घोड़े की कितनी कीमत है! उसके लिए जो कुछ मेरे पास था मैंने दे दिया। मेरे घोड़े को मुझे अभी लाकर
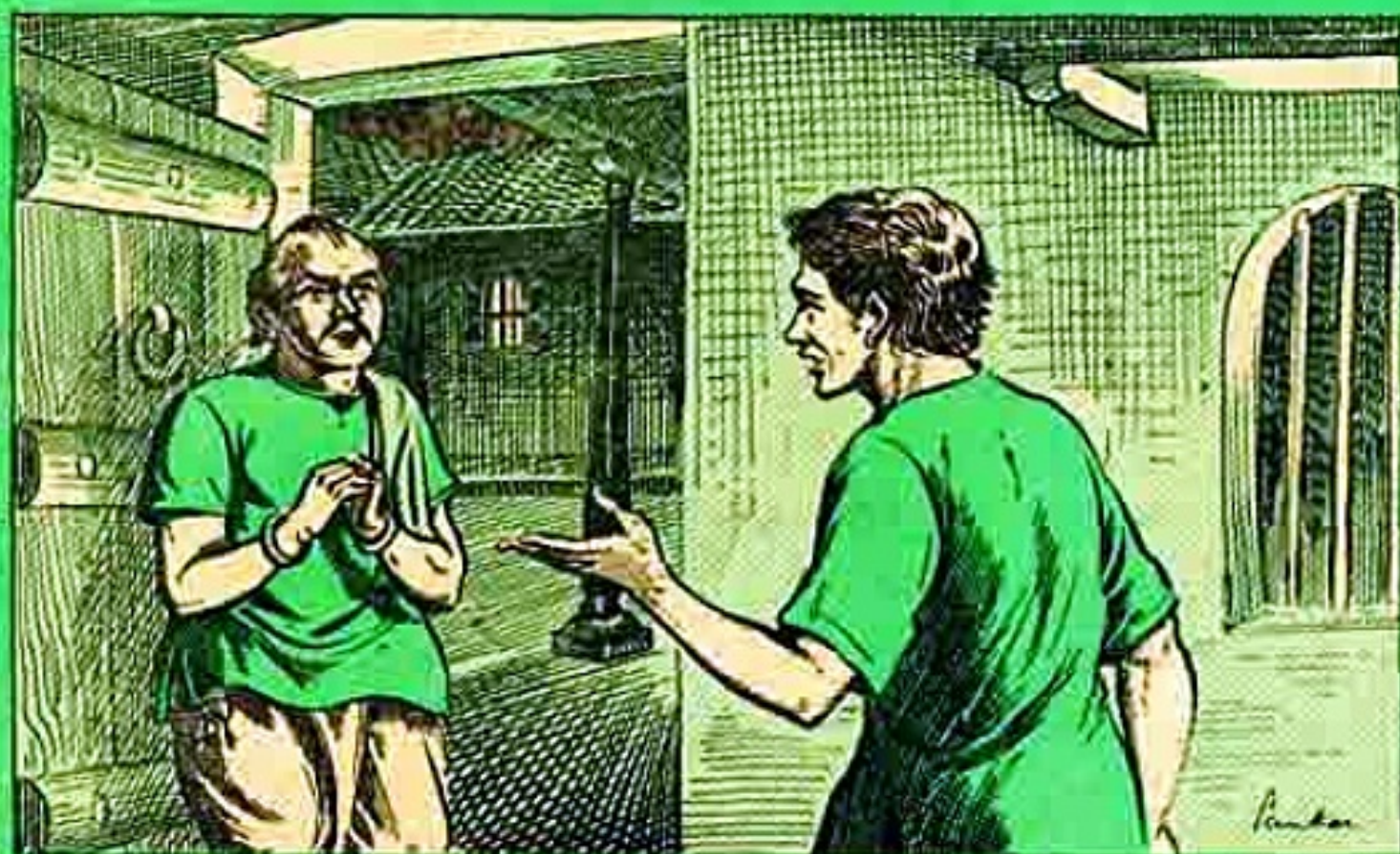
दो। मुझे सवेरे होते ही सरकारी काम पर बाहर जाना है।"

"सवेरा होने दीजिये। मैं जैसे तैसे आपके घोड़े को खोजकर लाऊँगा।" मुंशी ने गिड़गिड़ाते हुए कहा।

"अगर तुम्हें तुम्हारी लड़की न दिखाई दी तो क्या तुम सवेरा होने की इन्तजार करोगे? मुझे मेरा घोड़ा उससे लाखों गुना अधिक प्यारा है।" भिखारी ने गुस्से में कहा।

"तो इस आधी रात में, आप मुझे क्या करने के लिए कहते हैं?" मुंशी ने तंग आकर पूछा।

"मेरा घोड़ा खो दिया है। इसलिए मुझे अपनी लड़की दो और क्या?" भिखारी ने कहा।"

मुंशी को गुस्सा आ गया। दोनों लड़ने झगड़ने लगे। मुंशी की पत्नी ने आकर अपने पति से कहा—"सारी ग़ल्ती आपकी है। आप ठहरिये। अगर लड़की को एतराज न हो तो यही कर देते हैं। कभी न कभी किसी न किसी को तो उसे सौंपना ही होगा। अगर चाहेंगे भी तो हमें इससे अच्छा दामाद कहाँ मिलेगा? मैं जाकर लड़की की मर्जी मालूम करती हूँ।
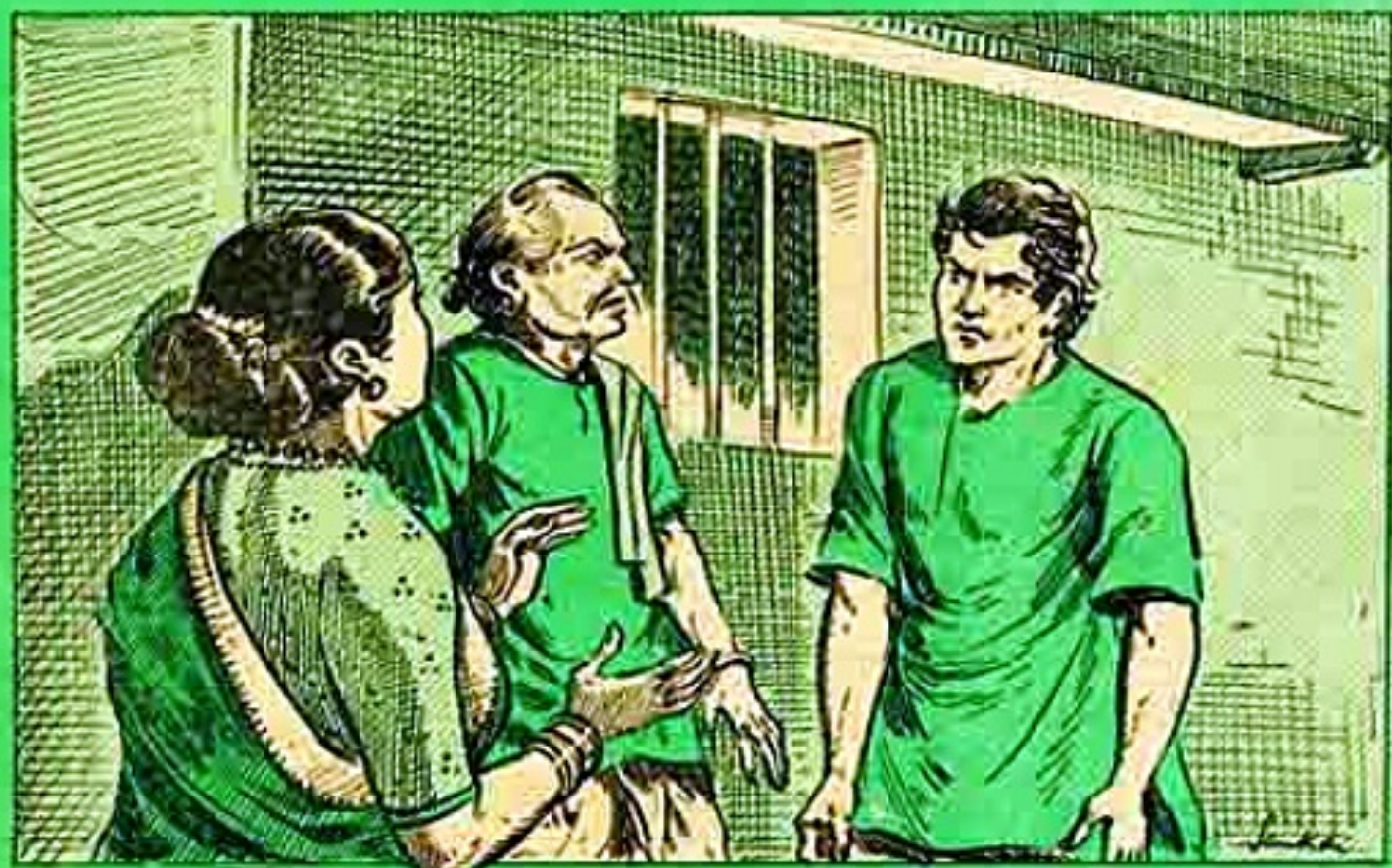
इस बीच आप लड़िये झगड़िये मत।" भिखारी ने सोचा कि भाग्य साथ दे रहा है। थोड़ी देर बाद मुंशी की पत्नी ने आकर कहा—"बाबू, लड़की आप से शादी करने के लिए बिल्कुल नहीं मान रही है। इसलिए मैंने उसे एक बोरे में बाँध दिया है। आप उस बोरे को लेकर अभी चले जाइये। रात में, आप जहाँ भी ले जायें उसे कुछ न मालूम होगा। इसलिए सवेरे आप जब उसे बोरे से बाहर निकालेंगे तो वह वापिस न आ सकेगी। तब आप उसे जैसे तैसे शादी के लिए मना लेना।"

भिखारी ने कभी न सोचा था कि ऐसी गुज़रेगी। उसे मुंशी की पत्नी की बात पसन्द आई। अगर उसने पहिले लड़की से शादी कर ली तो फिर दोनों धर्मशाला में आकर आराम से रह सकते थे।

इसलिए बोरा कन्धे पर डालकर वह आधी रात को ही निकल गया। बोरा भारी तो न था पर अन्दर एक व्यक्ति के इधर उधर हिलने के कारण, उसके लिए उसे उठाना बहुत मुश्किल हो गया—इसके अलावा इतना अन्धेरा था कि हाथ को हाथ न दीखता था। रास्ता भी नया था। जैसे तैसे उस बोरे को रखता, ढोता, रात भर चलकर भिखारी सवेरे एक जंगल में पहुँचा।

वहाँ उसने बोरा नीचे रखा। उसने बड़ी आशा से उस बोरे का मुख खोला। उसमें से एक बहुत बड़ा कुत्ता निकला और बिजली की तरह उसकी नाक काटकर भाग गया।

जो भाग्य, चने के दाने के कारण आया था, वह वहीं खतम हो गया। कटे नाक पर, हाथ रखकर, भिखारी फिर भीख माँगता जिन्दगी गुज़ारने लगा।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

एप्रिल १९५८ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिये। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ५, फरवरी '५८ के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास - २६

फरवरी – प्रतियोगिता – फल

फरवरी के फ़ोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो :
देकर मुद्रा, कहा सन्देशा

दूसरा फ़ोटो :
आता यह त्योहार हमेशा

प्रेषक: सुरेशकुमार सक्सेना,
C/o श्रीमती एस. बी. सक्सेना, इम्प्रूवमेण्ट एरिया, शहडोल.

विचित्र पक्षी

किवी नाम का एक विचित्र पक्षी न्यूजीलेन्ड में होता है। जब इस पक्षी के बारे में १८१२ में, ब्रिटिश विशेषज्ञों को मालूम हुआ तो उन्हें विश्वास न हुआ कि ऐसा पक्षी भी हो सकता है। वह वस्तुतः बहुत विचित्र पक्षी है।

किवी पक्षी की बिल्ली की तरह मूंछे होती हैं। पूँछ नहीं होती। होने को पँख होते तो हैं, पर उनकी लम्बाई एक अंगुल भी नहीं होती। इन बेकार डैनों को वह अपने छोटे छोटे, पंखों में छुपाकर रखता है। उसकी नाक लम्बी, और झुकी हुई होती है। उसके सिरे पर नथने होते हैं।

इससे अधिक विचित्र बात यह है, जो अंडा मादा किवी देती हैं, वह उसके भार के अनुपात में बहुत बड़ा होता है। अगर पक्षी का भार चार पाउन्ड होता है, तो अंडे का भार एक पाउन्ड होता है।

किवी शतुर्मुर्ग पक्षी जाति से सम्बन्धित है। अगर शतुर्मुर्ग, किवी के अंडो की तरह दे तो उनका भार ७५ पाउन्ड होगा। अंडों को नर पक्षी सेते हैं। जब अंडे से बचा निकलता है तो उसे ही अपना आहार खोजना होता है।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

एप्रिल १९५८ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें ।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिये । परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों । परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ७, फरवरी '५८ के अन्दर भेजनी चाहिये ।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास - २६

फरवरी – प्रतियोगिता – फल

फरवरी के फ़ोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं ।
इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा ।

पहिला फ़ोटो :
देकर मुद्रा, कहा सन्देशा

दूसरा फ़ोटो :
आता यह त्योहार हमेशा

प्रेषक: **सुरेशकुमार सक्सेना,**
C/o श्रीमती एस. बी. सक्सेना, इम्प्रूवमेण्ट एरिया, शहडोल.

भले ही उड़ नहीं सकता हो यह पक्षी जमीन पर चुपचाप बहुत तेजी से भाग चल सकता है।

किवी को ठीक तरह दिखाई नहीं देता। दिन में वह एक फूट से अधिक दूर नहीं देख सकता अन्धेरे में पांच छः फीट देख सकता है। परन्तु उसमें घ्राण शक्ति और श्रवण शक्ति बहुत होती है। उसकी नाक स्पर्शेन्द्रिय के रूप में भी काम करती है। रात्रि के समय यह कीवी की, वी, कीवी चिलाता है।

इस चिलाने के कारण ही उसे कीवी कहते हैं।

कीवी झाड़ झंखाड़ों में अपना खाना देख लेता है। उसके पैरों में बड़े बड़े नाखून होते हैं। वह उनसे जल्दी जल्दी मिट्टी खोद सकता है। उसे वर्षाकालीन साँप बहुत पसन्द हैं। वही कीड़े मकोड़े, पौधों के फल फूल आदि भी खाता है।

न्यूजीलेन्ड के आदिम वासी उसे पँखों के लिए मारते हैं। इसलिए यह पक्षी लुप्त-सा होता जा रहा है। वहाँ के अंग्रेज निवासियों ने भी भोजन के लिए, इसका १९ वीं शताब्दी में शिकार किया।

चित्र - कथा

एक दिन दास, बास "टाइगर" को साथ लेकर, शहर से बाहर टहलने गये। रास्ते में एक शरारती लड़के ने उनको देखकर अपना मेंढा उन पर छोड़ दिया। मेंढा उनका पीछा करने लगा। इस बीच "टाइगर" ने लड़के को धर दबोचा। उसके चिल्लाते ही मेंढा फिर वापिस भागा भागा आया। वह "टाइगर" की ओर लपका। जब वह एक तरफ़ हट गया तो वह अपने मालिक से जा टकराया। लड़का चिल्लाता चिल्लाता पास के गौबचे में जा गिरा।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press(Private) Ltd., and Published by him for Chandamama Publications, from Madras 26.—Controlling Editor : SRI 'CHAKRAPANI'

Photo by T. S. Nagarajan

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

आता यह त्योहार हमेशा

प्रेषक :
सुरेशकुमार सक्सेना, शहडोल.

CHANDAMAMA (Hindi) FEBRUARY 1959 Regd. No. M. 5452

रूपधर की यात्राएँ